श्रीकृष्ण का सर्व महान जीवन

श्रीकृष्ण निर्विवाद रूप से एक अत्यन्त महान् धार्मिक व्यक्ति भी थे और उन्हें राजनीतिक पदवी तथा प्रशासनिक कुशलता भी खूब प्राप्त थी। अत: श्री कृष्ण अपने चित्रों तथा मन्दिरों में सदैव प्रभामण्डल (प्रकाश के ताज) से सुशोभित तथा रत्न-जड़ित स्वर्णमुकुट से भी सुसज्जित दिखाई देते हैं। इसलिए मालूम रहे कि श्री कृष्ण जन्माष्टमी का उत्सव हमें धार्मिक और राजनीतिक दोनों सत्ताओं की पराकाष्ठा को प्राप्त श्री कृष्ण देवता की याद दिलाता है। आज जिन राजनीतिक नेताओं का जन्म-दिन मनाया जाता है, वे प्राय: रत्न-जड़ित स्वर्णमुकुट से सज्जित नहीं हैं, वे 'महाराजाधिराज-श्री' (His Exalted Highness) की उपाधि से तथा 'पवित्र-श्री' अथवा 'पूज्य-श्री'(Holiness) की उपाधि से युक्त नहीं हैं। अत: श्री कृष्ण जन्माष्टमी महोत्सव इस दृष्टिकोण से अनुपमेय है, क्योंकि श्री कृष्ण को तो भारत के राजा भी पूजते हैं और महात्मा भी महान् एवं पूज्य मानते हैं।

श्री कृष्ण जन्म ही से महान् थे

इस प्रसंग में ध्यान देने योग्य एक बात यह भी है कि दूसरे जो प्रसिद्ध व्यक्ति हुए हैं, जिनके जन्म-दिन एक सार्वजनिक उत्सव बन गये हैं, वे कोई जन्म ही से पूज्य या महान् नहीं थे। उदाहरण के तौर पर विवेकानन्द संन्यास के बाद ही महान् माने गये। महात्मा गांधी प्रौढ़ अवस्था में ही एक राजनीतिक नेता अथवा एक सन्त के रूप में प्रसिद्ध हुए। यही बात तुलसी, कबीर, वर्धमान महावीर आदि-

अमृत-सूची

- कर्मों की गहन गति *(सम्पादकीय)* 5
- पल-पल जीना *(कविता)* 7
- प्रश्न हमारे, उत्तर दादी जी के..8
- ईश्वरीय सेवा में.....10
- 'पत्र' संपादक के नाम 13
- रक्षा सूत्र.....14
- दादी जी के साये में 16
- सत्य, अहिंसा और ब्रह्मचर्य...19
- श्रेष्ठ स्मृति की कमाल 20
- खेलों के द्वारा शांति 21
- भोग खाकर 22
- मिला अनमोल आनन्द..... 23
- वाशिंगटन डी.सी. में..... 24
- ज़िंदगी का केक 25
- शान्ति सर्वोपरि है 26
- गीता सार 27
- सचित्र सेवा समाचार..... 30
- सेवा अर्थात् भाग्य.....32
- विश्व कल्याण सरोवर 34

सदस्यता शुल्क

भारत	वार्षिक	आजीवन
ज्ञानामृत	90 /-	2,000/-
वर्ल्ड रिन्युअल	90/-	2,000/-
विदेश		
ज्ञानामृत	1,000 /-	10,000/-
वर्ल्ड रिन्युअल	1,000/-	10,000/-

शुल्क के लिए सम्पर्क करें -
09414006904, 09414154383
hindigyanamrit@gmail.com

आदि के बारे में भी कही जा सकती है। परन्तु श्री कृष्ण की यह विशेषता है कि उनके जन्म के समय भी उनकी माता को विष्णु चतुर्भुज का साक्षात्कार हुआ और वे जन्म ही से पूज्य पदवी को प्राप्त थे। आप उनके किशोरावस्था के चित्रों में भी उन्हें दोनों ताजों से सुशोभित देखते होंगे। उनकी बाल्यावस्था के जो चित्र मिलते हैं, उनमें भी वे मोरपंख, मणि-जड़ित आभूषण तथा प्रभामण्डल से युक्त देखे जाते हैं। आज भी जन्माष्टमी के दिन भारत की माताएँ पालने या पंगूरे में श्री कृष्ण की किशोरावस्था की मूर्ति या किसी चेतन प्रतिनिधि रूप में बालक को लिटाकर उसे बहुत भावना से झुलाती हैं। आज भी श्री कृष्ण की झांकियाँ लोग बहुत चाव और सम्मान की दृष्टि से देखते हैं। अन्य किसी भी प्रसिद्ध व्यक्ति को इस प्रकार जन्म ही से प्रभामण्डल से युक्त चित्रित नहीं किया जाता।

श्री कृष्ण 16 कला सम्पूर्ण और सुन्दर थे

यह भी एक सत्य तथ्य है कि अन्य जिन व्यक्तियों की जयन्तियाँ मनाई जाती हैं, वे 16 कला सम्पूर्ण नहीं थे। केवल श्री कृष्ण ही सोलह कला सम्पूर्ण देव हुए हैं। श्री कृष्ण में शारीरिक आरोग्यता और सुन्दरता की, आत्मिक बल और पवित्रता की तथा दिव्य गुणों की अत्यन्त पराकाष्ठा थी। मनुष्य-चोले में जो सर्वोत्तम जन्म हो सकता है, वह उनका था। अन्य कोई भी व्यक्ति शारीरिक या आत्मिक दोनों दृष्टिकोणों से इतना सुन्दर, आकर्षक, प्रभावशाली और प्रभुत्वशाली नहीं हुआ। सतयुग से लेकर कलियुग के अन्त पर्यन्त अन्य कोई भी इतना महान् न हुआ है, न हो सकता है। श्री कृष्ण का व्यक्तित्व इतना महान और आकर्षक था कि यदि आज भी वे इस पृथ्वी पर कुछ देर के लिए प्रगट हो जायें तो क्या हिन्दू, क्या मुसलमान, क्या ईसाई, क्या यहूदी, सभी उनके सामने नत-मस्तक हो जायेंगे और मुग्ध होकर उनकी छवि निहारते खड़े रहेंगे।

श्री कृष्ण इतने महान् कैसे बने?

अब प्रश्न उठता है कि जबकि श्री कृष्ण जन्म ही से महान् थे तो अवश्य ही उन्होंने पूर्व जन्म में कोई महान् पुरुषार्थ किया होगा। लोगों में एक छन्द भी प्रसिद्ध है जिसका अर्थ यह है कि 'हे राधे तुमने कौन-सा ऐसा पुरुषार्थ किया था कि जिससे वैकुण्ठ नाथ श्री कृष्ण तुम्हारे अधीन हो गये?' तो जो बात राधे के बारे में पूछने योग्य है, वही श्री कृष्ण के बारे में पूछी जा सकती है कि 'वह कौन-सा सर्वश्रेष्ठ पुरुषार्थ था जिससे कि उन्होंने उस सर्वश्रेष्ठ देवपद को तथा राज्य-भाग्य को प्राप्त किया?'

श्रीमद्भागवत् में लिखा है कि कृष्ण योगीराज थे, वे योगाभ्यास किया करते थे । परन्तु सोचने की बात है कि योगाभ्यास या अन्य कोई पुरुषार्थ तो किसी अप्राप्त सिद्धि की प्राप्ति ही के लिए किया जाता है, परन्तु श्री कृष्ण तो पूर्णत: तृप्त थे क्योंकि उन्हें धर्म, धन और जीवनमुक्ति सभी श्रेष्ठ फल प्राप्त थे, सोलह कला सम्पूर्ण देवपद से भला और क्या उच्च प्राप्ति हो सकती थी कि जिसके लिए श्री कृष्ण योगाभ्यास करते? श्री कृष्ण के जीवन में तो किसी दिव्य गुण की, आत्मिक पवित्रता या शक्ति की या श्रेष्ठ भाग्य के अन्तर्गत गिनी जाने वाली अन्य किसी वस्तु, भोग्य, आयु आदि की कमी नहीं थी कि जिसकी प्राप्ति के लिए वे योगाभ्यास करते। अतएव विवेक द्वारा तथा ईश्वरीय महावाक्यों द्वारा स्पष्ट है कि वास्तव में श्री कृष्ण ने अपने पूर्व जन्म में अर्थात् श्री कृष्ण पद प्राप्त होने से पहले वाले जन्म में योगाभ्यास किया था।

उक्ति प्रसिद्ध है कि ईश्वरीय ज्ञान द्वारा ''नर को श्री नारायण और नारी को श्री लक्ष्मी पद की प्राप्ति होती है।'' तो स्पष्ट है कि श्री कृष्ण अपने श्री नारायण पद की प्राप्ति से पहले वाले जन्म में साधारण नर रहे होंगे और उसी जीवन में उन्होंने गीता-ज्ञान की धारणा की होगी। गीता में ये ईश्वरीय वाक्य हैं कि 'हे वत्स्, इस ज्ञान और योग द्वारा तू स्वर्ग में राजा बनेगा' और कि 'तू इस योग द्वारा श्रीमानों के घर में जन्म लेगा।' इससे सिद्ध है कि 'श्री' की देवोचित

(शेष..पृष्ठ 33 पर)

कर्मों की गहन गति

मानव का वर्तमान उसके अतीत की उपज है। अतीत पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं रहता। परंतु हमें यह सुअवसर मिला हुआ है कि हम वर्तमान कर्मों को अपने प्रयत्नों से या अपने पुरुषार्थ से बदल लें। दूसरे शब्दों में, जीवन में हमें क्या मिलता है, यह है प्रारब्ध और मिले हुए को हम किस प्रकार इस्तेमाल करते हैं, यह है पुरुषार्थ। एक तरफ हम अतीत का परिणाम हैं और दूसरी तरफ भविष्य के जनक।

एक ही जन्म में हम मन-वचन-कर्म से इतने अधिक कर्म करते हैं कि जीवनकाल में उनमें से बहुत कम फलित होते हैं, बाकी के संचित होते हैं। अत: हमारे सिर पर ऐसे कई जन्मों के शुभ-अशुभ कर्मों के ढेर हैं जिन्हें भोग द्वारा या योग द्वारा या सज़ा द्वारा चुक्ता करना अनिवार्य है।

विस्मृति बनाती है
कर्मों की गति को गहन

संचित कर्मों के ढेर में से जिन कर्मों के फलने का समय होता है, उनको मिलाकर प्रारब्ध बनता है। उसी अनुसार जन्म होता है। नया जन्म लेते ही पूर्वजन्म के कर्मों की विस्मृति हो जाती है। यह विस्मृति ही कर्मों की गति को गहन बनाती है। हमारे कर्मों का कब, कहाँ, कैसे फल मिलेगा, यह भी बहुत गहन राज़ है। प्राप्त जन्म के कर्मों को ही दुख-सुख का आधार मान लेना अज्ञान है। प्राप्त जन्म के कर्म तो अभी आगे फलित होंगे। पिछले कर्म दुख-सुख के रूप में आज फलित हैं। इसलिए वर्तमान के विकारी मानव को साधन संपन्न देखकर और सदाचारी को साधनविहीन देखकर इसे अन्याय ना समझें। सृष्टि रूपी ड्रामा में कहीं भी अन्याय है ही नहीं, यह ड्रामा न्यायकारी और कल्याणकारी है। इतना जान लेने के बाद दुख-सुख दोनों को नम्रतापूर्वक स्वीकार कर लेना चाहिए। जैसे एक किसान अपने खेत के खट्टे और मीठे दोनों प्रकार के फलों को यह सोचकर स्वीकार करता है कि बीज तो मैंने ही बोया था। इसी प्रकार हमें भी स्वीकार कर लेना चाहिए। कबीरदास जी ने कहा है,

कबीरा तेरे पुण्य का
जब तक है भण्डार।
तब तक अवगुण माफ हैं,
करो गुना (गुनाह) हज़ार।।

भावार्थ यह है कि जब तक प्रारब्ध में पुण्य कर्मों के प्रकट होने का समय है, तब तक उसे बुरे कर्मों का कोई फल नहीं मिलेगा किंतु इस समय के पूर्ण होते ही पापकर्मों का प्रकट-काल शुरू होगा और दुख भोगना पड़ेगा। यही कारण है कि अच्छे आदमी को पूर्व के पापों का उदयकाल आकर उसे सताता है और बुरे आदमी के भी पुण्यों का उदयकाल आकर उसे सुख दे देता है पर स्थायी दोनों ही नहीं हैं।

मेयर बनना स्थगित, क्यों?

कर्म और फल पर एक कहानी इस प्रकार है कि एक व्यक्ति की शादी हुई पर बीबी से नहीं बनी। उसने मार-पीटकर बीबी को घर से निकाल दिया। बीबी कहीं जाकर शराब बेचने का धंधा करने लगी। इस आदमी ने इसके बाद वह शहर छोड़ दिया और काफी मेहनत कर-करके दूसरे शहर में लोगों की भलाई के काफी कार्य किये। लोग उससे खुश थे। एक दिन उन्होंने उसे मेयर चुनने का फैसला किया और एक सभा बुलाई। इस बात का आस-पास काफी प्रचार किया गया था। अत: ग्रामीणों की भी अच्छी खासी भीड़ जमा हो गई थी। शहर के मुख्य लोगों के साथ इसे मंच पर बिठाया गया और ज्यों ही सर्वसम्मति से उसके मेयर चुने जाने की घोषणा होने वाली थी, एक प्रौढ़ महिला भीड़ में से निकलकर मंच पर पहुँच गई। उसने उद्घोषक को उद्घोषणा करने से रोक दिया। सभा में खलबली मच गई। आयोजकों ने उससे कारण पूछा। महिला ने कहा, यह आदमी मेयर नहीं बन सकता, यह मेरा

कर्ज़दार है। इसने मुझे मारा और घर से निकाला, मुझे कोई हक नहीं दिया, दर-दर की ठोकरें खाने को छोड़ दिया। जो मेरे साथ न्याय ना कर सका वो समाज के साथ क्या न्याय करेगा। महिला की बात पर सबने गौर किया और उसका मेयर बनना स्थगित हो गया।

कर्म कभी भी उभर सकता है

कहानी क्या कह रही है? यही ना कि किया हुआ कर्म कभी भी उभर सकता है। यह कर्म मान लीजिए, चालीस वर्ष पहले का था। इसने इतने दिन क्यों लगाये उभरने में? देखिये, बीज तभी तो अंकुरित होगा, बढ़ेगा, फलेगा जब उसे अनुकूल हवा-पानी मिलेंगे। कर्म का फल भी अपने अनुकूल समय पर ही सामने आयेगा। इस आदमी ने बहुत अच्छे काम किये पर अपने उस पूर्व कर्म को काटने की तरफ कोई ध्यान न दिया। अगर यह एकांत में बैठकर आत्म-अवलोकन करता कि इस जीवन में मेरे से कोई भूले-भटके भी पापकर्म तो नहीं हुआ तो उसे अपनी गलती का अहसास हो जाता। उसने मन ही मन उस महिला से माफी माँगी होती या उसे ढूँढ़कर उसे कुछ हर्जाना, हक देने का सुप्रयास किया होता तो शायद कर्म-फल की उग्रता कुछ कम होती। महिला यूँ सभा में न पहुँचकर, शायद अकेले को कुछ बोलकर शांत हो जाती या अन्य तरीके से उसके बदले की आग का शमन हो जाता पर इस तरह जगहँसाई का कारण ना बनती।

विकर्म काटने की ईश्वरीय युक्तियाँ

प्यारे बाबा भी हम बच्चों को कहते हैं, बच्चे आज तक जो भी पापकर्म हुए हैं, उन्हें सच्चाई से बाबा को लिखकर दो। ऐसा करने से आधा पाप माफ होगा और भविष्य में उसे न दोहराने का बल मिलेगा। भूल से या जाने में पापकर्म हो जाये तो उसके बदले कई गुणा श्रेष्ठ कर्म करो। पश्चाताप में समय न गंवाकर फिर कभी न करने की दृढ़ प्रतिज्ञा करो।

बाबा यह भी कहते हैं, प्रतिदिन उन आत्माओं को इमर्ज कर उन्हें विशेष शुभभावनाओं का दान दो जो आपसे किसी कारण से नाखुश हैं। उन्हें छोड़ ना दो। एक आत्मा भी असंतुष्ट रह गई तो आपके राजा बनने के मार्ग में रोड़ा डाल सकती है या प्रारब्ध को कम कर सकती है।

कोई असंतुष्ट ना भी हो पर स्नेहवश उसने हमें बहुत कुछ दिया है तो उसका रिटर्न भी हम सप्रयास दें, नहीं तो उसके दिये हुए का कर्ज तो हम पर है ही, चाहे वह गिनती ना करे, ना मांगे, ना किसी को बताये। जिस स्नेह भाव से उसने दिया, उसी स्नेहभाव से आप भी लौटा दो (किसी भी रूप में) ताकि आप संसार छोड़ते वक्त हल्के अर्थात् कर्म-भार से मुक्त हों।

छोटी-सी आत्मा में अनेक जन्मों के संस्कार

कठोपनिषद् में लिखा है कि मनुष्य के शरीर में एक सूक्ष्म शरीर होता है जिसमें उसके सब कर्म लिखे जाते हैं। यह भी लिखा है कि जीव के सब कर्मों का फल अपने आप उसके अंदर से ही प्रकट होता है। कर्म चाहे कितना भी छिपकर किया जाये, उसका भुगतान जरूर होता है।

जिस प्रकार कैसेट के पतले से फीते पर कुछ रेखाओं के माध्यम से शब्द अंकित हो जाते हैं, कंप्यूटर की छोटी-सी चिप पर असंख्य सूचनायें अंकित हो जाती हैं तथा उचित समय या निर्देशन आने पर पुन: प्रकट हो जाती हैं, इसी प्रकार छोटी-सी आत्मा में भी अनेक कर्मों के संस्कार संचित रहते हैं जो समय या अनुकूल परिस्थिति आने पर प्रकट हो जाते हैं। कर्म के भी संस्कार होते हैं और जिन बातों का हम अध्ययन करते हैं, बार-बार दोहराते हैं तो उस स्मृति के भी संस्कार बनते हैं।

जैसे कोई भी ग्रंथ, नाम या मंत्र बार-बार दोहराने से याद हो जाता है। हजार बार दोहराने से जीवन में उसके विस्मृत होने का भय नहीं रहता और एक लाख बार दोहराने के पश्चात् वह स्मृति में कभी नष्ट नहीं होता और मृत्यु के पश्चात् भी स्पष्ट बना रहता है।

इस अर्थ में, आज हम जिन दिव्यगुणों का स्मरण, चिंतन,

व्यवहार बार-बार करते हैं, वे 21 जन्मों तक हमारे व्यक्तित्व का हिस्सा बने रहते हैं। इसलिए पुन: पुन: श्रेष्ठ गुणों की स्मृति का बहुत महत्व है।

धन और कर्म के हिसाब में अंतर

धन के हिसाब और कर्मों के हिसाब में अंतर है। धन जड़ वस्तु है, उसे देखा जा सकता है, हस्तांतरण किया जा सकता है। एक से उधार लेकर और दूसरे को उधार देकर हम उन दोनों को आपस में हिसाब कर लेने को कह सकते हैं। परंतु कर्मों के संबंध में हम ऐसा नहीं कर सकते। मान लीजिये, हमारे द्वारा एक आत्मा को द्वापर-कलियुग के 63 जन्मों में से किसी जन्म में दुख दिया गया और संगमयुग आने तक दुख देने के इस कर्म का हिसाब चुक्तू नहीं हुआ। संगमयुग पर हमने कई आत्माओं का ईश्वरीय श्रीमत अनुसार भला किया, इससे हमारा पुण्य का खाता भी जमा हो गया। अब इस पुण्य का फल भविष्य में प्रारब्ध रूप में प्राप्त होगा। यह निश्चित है पर उस आत्मा के साथ किये गये कर्म का फल तो अभी, इसी शरीर द्वारा भोगकर पूरा करना है। इस भोगना के रूप में, धन का घाटा, शारीरिक व्याधि, अपमान, ग्लानि, प्राकृतिक विपत्ति आदि कुछ भी हो सकता है। योगबल के द्वारा चुक्ता न होने की सूरत में इस प्रकार की भोगना आती है। यदि भोगना से पूरा न हो तो आगे सूक्ष्मवतन में सजा द्वारा हिसाब चुक्त होगा। हम यह नहीं कह सकते कि हमने जो पुण्य किये हैं उनको इस कर्म की एवज में स्वीकार कर लिया जाये। हमें पहले पुराने पापों के हिसाब को योगबल या भोग द्वारा चुक्तू करना पड़ेगा। बाद में पुण्यों का फल आगे के जन्म, सतयुग में प्रारब्ध रूप में मिलेगा।

ज्ञानी को परीक्षा क्यों?

इसी कारण कई ज्ञानी आत्माओं को भी शारीरिक रोग या भाव-स्वभाव के पेपर पार करने पड़ते हैं। हाँ, ज्ञान की पराकाष्ठा वाले को ये पेपर, पेपर न लगकर खेल लगते हैं जिन्हें वह साक्षीभाव से पूरा करता है और ज्ञान-योग की मस्ती में मस्त रहता है। लेकिन पुराने पापों के हिसाब, योगबल से चुक्ता न होने की सूरत में सामने ज़रूर आता है जिसे देख लोग प्रश्न करते हैं कि आप तो भगवान को मानते हो, फिर आपको कष्ट क्यों? कष्ट इसीलिए क्योंकि योगबल से चुक्ता न होने की सूरत में उसे इसी शरीर द्वारा भोगकर पूरा करना है।

– ब्र.कु. आत्म प्रकाश

पल-पल जीना सीख रही हूँ

पल–पल जीना सीख रही हूँ
हर पल जीना सीख रही हूँ
पास्ट और फ्यूचर में भटक रही थी
अब प्रेजेन्ट में आना सीख रही हूँ
उजालों की ओर आना सीख रही हूं
खामोशी में, तन्हाई में मीठे बाबा
को पाना सीख रही हूँ
पीस को, प्यार को, खुशी को बाहर ढूँढ़ रही थी
अब अंदर से जीना सीख रही हूँ
मधुबन जाकर इनर पीस और
इनर पावर को समझा
अब प्रैक्टिकल में लाना सीख रही हूँ
फिजिकल सेन्स में जीने की आदत थी
अब सोल सेन्स को प्रैक्टिकल लाइफ में
लाना सीख रही हूँ
पल–पल जीना सीख रही हूँ

– रोशन, कराची

वैश्विक प्रेम के प्रतीक रक्षाबंधन पर्व तथा सतयुगी दुनिया के महाराजकुमार श्रीकृष्ण के जन्मोत्सव जन्माष्टमी पर्व की पाठकगण को कोटि-कोटि बधाइयाँ

प्रश्न हमारे, उत्तर दादी जी के

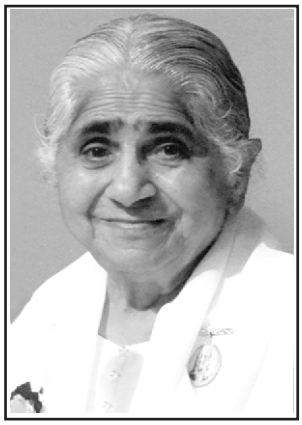

दिव्यबुद्धि के वरदान से विभूषित आदरणीया दादी जानकी जी, हर प्रकार के प्रश्नों के उत्तर देकर आत्मा को संतोष से भर देती हैं। बुद्धिवानों की बुद्धि बाबा ने उन्हें ऐसी कला प्रदान की है कि वे उलझे कर्मों की गुत्थियाँ सुलझाकर समाधानस्वरूप बना देती हैं। प्रस्तुत हैं भाई-बहनों द्वारा पूछे गए प्रश्नों के दादी जानकी द्वारा दिये गये उत्तर ... – सम्पादक

प्रश्नः- लगावमुक्त की निशानी क्या है?

उत्तरः- बाबा ने कहा, बच्चों को लगावमुक्त बनना है। तो जो सुनते हैं वह स्वरूप में आता है? सभी लगावमुक्त हो ना! अगर थोड़ा भी लगाव कोई व्यक्ति, वैभव से है, तो यह भी कमजोरी है। मैं देही-अभिमानी स्थिति में नहीं हूँ, तभी किसी का ध्यान मेरी देह में जाता है। तो देही अभिमानी स्थिति में रहने से बाबा याद रहेगा। दूसरा कोई मेरी देह को याद नहीं करेगा। अगर कोई मेरी देह को याद करता है तो बुद्धि वहाँ पुल हो जायेगी (खिंच जायेगी) फिर याद में मेहनत करनी पड़ेगी। तो कोई भी देहधारी मेरी बुद्धि को खींचे नहीं। सेवा कितनी भी करो बुद्धि सालिम रहे। एक बाबा दूसरा न कोई। दिल में सिवाए एक बाबा के और कुछ भी याद न हो। देह, संबंध या कोई भी कारण हो, कोई भी परिस्थिति हो लेकिन बाबा की पावरफुल याद परिस्थिति को दूर कर देती है।

प्रश्नः- बाप समान पीस, प्यूरिटी के टावर बनने की विधि क्या है?

उत्तरः- भक्ति में व्रत का बहुत महत्व है। कोई-कोई व्रत बहुत अच्छा रखते हैं। हमारा व्रत है पवित्रता का, श्रेष्ठ संकल्प का व्रत है। ऐसा व्रत हमारी वृत्ति को सदा के लिए चेंज कर देता है। प्युरिटी से वृत्ति पीसफुल बन जाती है। जरा भी प्युरिटी की कमी है तो सच्ची शान्ति का अनुभव नहीं होगा। जैसे बाबा नॉलेज, लव, पीस और प्युरिटी का टावर है, ऐसे हमें भी टावर बनना है, टावर ऊंचा होता है तो ये चारों बातें हमको ऊंच ले जाती हैं। लेकिन फाउण्डेशन है प्युरिटी इसलिए बाबा हम सबको व्यर्थ संकल्प की अपवित्रता को भी समाप्त करने की शिक्षायें दे रहा है। सदा शुद्ध संकल्प हों। कोई निमित्त शुद्ध संकल्प आया, बिना मेहनत के साकार हो गया। संकल्प में स्वच्छता, निःस्वार्थ भाव और सेवा में निष्काम भावना हो।

प्रश्नः- योगी के स्वप्न कैसे हों?

उत्तरः- हम बाबा से खुश, बाबा हमारे से खुश, ऐसे खुशनुमा रहने वाले क्या करेंगे? संकल्प में, स्वप्न में भी किसी को खुशी देंगे। अपने को देखो, मेरे को कौन से स्वप्न आते हैं? स्वप्न में भी याद और सेवा और कुछ नहीं। न लड़ाई, न झगड़ा, न अशुद्ध संकल्प। अगर दिन भर में कुछ व्यर्थ संकल्प, अशुद्ध संकल्प चला तो स्वप्न में भी जरूर आयेगा, फिर हमारी स्थिति अच्छी नहीं होगी। तो ऐसी स्थिति बनाना जो औरों को भी सूक्ष्म प्रेरणा मिले।

प्रश्नः- भगवान किन बच्चों की मदद करता है?

उत्तरः- मुझे कोई मददगार नहीं है, यह ख्याल भी नहीं आना चाहिए। बाबा से दिल का प्यार है, हिम्मत और सच्चाई है तो अपने आप बिगर बुलाये, बिगर बोले मदद मिलती है। मैं मानती हूँ, बाबा की मदद बहुत है पर मांगती कभी नहीं हूँ। मांगने से वह कभी मदद नहीं करेगा, बाबा भी हठीला है, हमको रॉयल बच्चा बनाता है। अगर कहेंगे, बाबा मैं क्या करूं,

मुझे मदद करो ना! तो नहीं करेगा। कई लिखते हैं, मैंने बाबा से बहुत मदद मांगी, बाबा ने मदद नहीं की। कोई हैं, चिल्लाते हैं, मैं क्या करूं, माया बहुत तंग करती है.. तो चिल्लाने से बाबा मदद नहीं देता है। मैंने बाबा को प्यार से कहा, बाबा, आप अच्छा चला रहे हो, तो बाबा ने कहा, चल रही हो तो चला रहा हूँ। अगर कहूँ, अच्छा चलाओ ना, तो कहेगा, लंगड़ी हो क्या! अच्छा चलेंगी तो खुशी से मदद करता है। तो मैं आपको बाबा का अन्त बताती हूँ कि बाबा कैसा है। बाबा को समझ करके उसे ऐसा साथी बनाओ, जो बाबा भी देखे कि मेरा बच्चा सदा हर्षित है, मुरझाता या मूंझता नहीं है, तो खुश हो जाता है। जो घड़ी-घड़ी मूंझता या मुरझाता है तो बाबा क्या कहेगा, 'बच्ची, मैं कहता हूँ, मुस्कराओ और तुम मुरझाती हो!'

प्रश्नः- दिन अच्छा हो, इसके लिए क्या करें?

उत्तरः- बाबा कहते हैं, बच्चे, शरीर छोड़ने तक भी स्टडी करते रहना। ऐसे नहीं, मुझे इतना साल हुआ है, मुरलियां तो पढ़ी हैं, रिवाइज कोर्स ही तो है, ऐसा ख्याल आया, मुरली मिस की तो वह दिन अच्छा नहीं होगा। वन्डर तो यह है, रिवाइज़ कोर्स है, पर आज के लिए वही ज़रूरी है। बाबा ने जो टाइम टेबल बनाकर दिया है, उस पर चलते चलो।

प्रश्नः- योगी की दृष्टि-वृति कैसी हो?

उत्तरः- दुनिया सच की खोज में है, बाबा हमको कहता, सच तो बिठो नच। सच्ची दिल से, मीठी दृष्टि से, योगी की दृष्टि महासुखकारी है। हर एक अपनी दृष्टि देखे। बदल रही है। शुरू में कहते थे, मण्डली वालों की आंखों में जादू है। कौन सा जादू है? हर एक देखो, कौन-सा जादू लगा है? देह, दुनिया को नहीं देखो, दिखाई नहीं पड़ती है। उसका हमारे ऊपर कोई असर नहीं हो सकता। उसे हमें बदलना है। ऐसी दृष्टि हो जो दुनिया बदल जाए। झूठ, हिंसा खत्म हो जाए। यह शक्ति सर्वशक्तिवान से मिली है। बाबा ज्ञान का सागर है, अनुभव करो। शान्ति का सागर, प्रेम का सागर है, पतित-पावन है। कैसी भी आत्मा है, पावन बना देता है। सर्वशक्तिवान है, अनुभव करो। वह सर्वशक्तिवान बाप हमको अपना बना करके कहता है, रहो संसार में पर मुस्कुराते रहो।

प्रश्नः- रोज की मुरली का अधिकतम फायदा हो, उसकी युक्ति क्या है?

उत्तरः- बाबा शब्द मुख से निकलता है तो उसका अनुभव अगर सुनाने बैठ जाऊं तो कितना समय चाहिए! सारे दिन में बाबा-बाबा अन्दर से आवाज़ निकलता है। वन्डरफुल बाबा आप कितनी अच्छी बातें सुनाते हो, गिनती नहीं कर सकते। हम बाबा की मुरली सुनने के बाद फौरन कोई कामकाज में नहीं लगेंगे। पहले अन्दर सारी मुरली रिवाइज़ करेंगे। बाबा ने जो डायरेक्शन दिया, वह मुझे करना है। बाबा कहता था, बच्ची, नाश्ता करने के पहले कथा ज़रूर करो। तो मुरली सुनने के बाद बगीचे में चली जाती थी, वृद्धों को ज्ञान सुनाती थी। जहाँ जीना, वहाँ सीखना। मेरी दिल है, मैं शरीर में होते कर्मातीत अवस्था का अनुभव करूं। कर्मातीत बने और शरीर छोड़ दिया तो उससे क्या... शरीर में होते कर्मबंधन से मुक्त रहूं। शरीर में होते, सेवा करते उस स्थिति का अनुभव करूँ। तो ऐसा ग्रुप बनाकर तैयारी करें। कभी मुरली सुनते आंखें बन्द भी न हों। बाबा सब देखता है, बच्चे क्या करते हैं। बाबा के पास टी.वी. है, उससे सब देखता है। जहाँ भी हो, बाबा साथ देता है। एक बार जिसने बाबा कहा, उसको बाबा छोड़ता नहीं है। बाबा चाहता है, मैं बच्चों को कंधे पर बिठाकर सारी दुनिया को दिखाऊं कि देखो, मेरे बच्चे कौन हैं, कितनी ईश्वरीय आकर्षण है, जो ईश्वरीय आकर्षण सारी दुनिया से पार ले जाने वाली है। ❖

अन्य आत्माओं के परिवर्तन का इंतजार न कर, अपने संस्कारों के परिवर्तन का इंतजाम करो, विश्व परिवर्तन की नींव स्वयं बनो

ईश्वरीय सेवा में नृत्य नाटिकाओं तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों की भूमिका

● ब्रह्माकुमार रमेश शाह, मुंबई (गामदेवी)

पिछले दो लेखों में भारत में ईश्वरीय सेवा के प्रारंभकाल में आने वाली कठिनाइयों के संबंध में चर्चा की गई। वर्तमान समय दैवी परिवार में बहुत से ऐसे भाई-बहनें हैं जो मातेश्वरी तथा ब्रह्मा बाबा के अव्यक्त होने के बाद दैवी परिवार में शामिल हुए हैं, उन्हें यह मालूम रहे कि किस प्रकार से हमारे पूर्वजों ने कैसी-कैसी विकट परिस्थितियों में ईश्वरीय सेवायें की हैं। आज भारत में नये सेवाकेन्द्र खोलने में इतनी मेहनत नहीं है क्योंकि अब हमारे पास सेवा के विविध साधन तैयार हो गये हैं जैसे कि प्रदर्शनी के चित्र, राजयोग शिविर, सीडी, डीवीडी, टीवी, प्रोजेक्टर आदि। परंतु ईश्वरीय सेवा के आदिकाल में ये साधन नहीं थे और हमारी दादियों को प्रवचनों तथा व्यक्तिगत मुलाकात के द्वारा ही सेवायें करनी पड़ती थीं। ऐसे में लोगों की प्रतिक्रिया भी बहुत विचित्र होती थी क्योंकि वे ब्रह्माकुमारी बहनों को जानते नहीं थे। मुंबई में सेवा के लिए तीन पैर पृथ्वी नहीं मिलती थी और इसलिए उल्हासनगर के मिलिट्री कैम्प में दादी प्रकाशमणि के पिताजी के नाम पर कराची की प्रोपर्टी के एवज़ में एक यूनिट मिला था। उसी यूनिट में आबू से बहनें आकर रहती थीं। खाना-पीना साथ लेकर इधर-उधर

सब जगह सेवा करतीं और दोपहर में दीदी मनमोहिनी के लौकिक रिश्तेदारों द्वारा मिले हुए फ्लैट में जाकर विश्राम करती। खाना-पीना खाकर फिर सेवार्थ निकल जातीं।

उन दिनों आदरणीया दादी जानकी भी बॉम्बे में वर्ली के पास अपने एक लौकिक रिश्तेदार के पास ठहरती थी। पैदल चलकर ही हैंगिंग गार्डन और वर्ली की चौपाटी में ईश्वरीय सेवार्थ जाते थे। मेरे लौकिक घर में भी दादी जानकी क्लास कराने आते थे। वह समय था 1961 के बाद का जब मैं और ऊषा जी ईश्वरीय सेवा में जुट गये थे। उस ज़माने में सेवा में क्या-क्या दिक्कतें आती थी, उसका शब्दचित्र आपके सामने पेश कर रहा हूँ।

मुंबई के वाटरलू मेन्शन सेन्टर में रक्षाबंधन पर ईश्वरीय सेवा करने के संबंध में दादी निर्मलशांता की अध्यक्षता में एक मीटिंग हुई। प्रस्ताव रखा गया कि रक्षाबंधन पर एक बड़ा कार्यक्रम करें ताकि सबको ईश्वरीय संदेश मिले। सभी ने इसका समर्थन किया। दादी निर्मलशांता ने सबसे पूछा कि किस तरह का कार्यक्रम करें, कितने लोगों को बुलायें। मैं उन दिनों नया-नया ईश्वरीय सेवा में जुटा था। मैंने दादी निर्मलशांता से कहा कि एक बड़ा हॉल लेकर 4-5 हज़ार लोगों को बुलाएँ और रक्षाबंधन कार्यक्रम धूमधाम से मनायें। दादी निर्मलशांता ने कहा कि रमेश जी, आपको मालूम है कि हमारी दादी जानकी के प्रवचन में भी बहुत थोड़े लोग आते हैं तो आप इतना बड़ा हॉल क्यों लेना चाहते हैं,

क्या आपको लगता है कि इतने लोग आयेंगे? मैंने कहा, मैंने लौकिक में इतने बड़े-बड़े कार्यक्रम, आनन्द उत्सव किये हैं। इसलिए 4-5 हजार का हॉल भरना मेरे लिए मुश्किल नहीं है। काफी चर्चा के बाद दादी निर्मलशांता ने मरीन लाइन रेलवे स्टेशन के पास ताराचंद हॉल किराये पर लेने की स्वीकृति दी जिसकी क्षमता 350 लोगों की थी। यह हॉल भी हमें शनिवार दोपहर 3 से 6 बजे के लिए मिला। दादी निर्मलशांता ने तो सामान्य रीति से कार्ड का मैटर बनाया। मैंने और ऊषा जी ने इसमें परिवर्तन किया और कार्यक्रम में लिखा – 'Drama, Dance, Dialogue and Discourse'. इस प्रकार से आधुनिक शैली के आधार पर निमंत्रण पत्र बनाया। दादी निर्मलशांता जी साक्षी होकर कार्यक्रम की तैयारी में हमारी मदद करते थे परंतु हँसते-हँसते कहते भी थे कि देखो रमेश, बहुत थोड़े लोग आने वाले हैं और इतने बड़े हॉल में यह कार्यक्रम ठीक रीति से चल नहीं पायेगा। मैं और ऊषा जी दादी जी को हँसते हुए कहते थे, दादी जी, वह ज़माना आपके द्वारा ईश्वरीय सेवा की स्थापना का था, अब हम आये हैं तो हमें अपने विचारों से ईश्वरीय सेवा करने दीजिये। कार्यक्रम में सबको आकर्षित करने के लिए मैंने एक ड्रामा लिखा – 'प्रभु की खोज' तथा डायलाग द्वारा 'परमात्मा कौन है' इस पर रोचक प्रश्न-उत्तर बनाये। कुमारियों का डांस भी रखा। अंत में दादी निर्मलशांता जी का प्रवचन भी रखा। कार्यक्रम के दिन दोपहर 3 बजे से लोग आने लगे और 5 मिनट में ही हॉल भर गया। दादी निर्मलशांता ने कहा, हॉल भर गया है, मैं अंदर नहीं, बाहर बैठूँगी और सबसे मिलती रहूँगी, आप कार्यक्रम आरंभ करें। आधे घंटे के ड्रामा 'प्रभु की खोज' में मुख्य नायिका ऊषा जी थी। उन्होंने अपने हृदयस्पर्शी अभिनय के द्वारा लोगों का दिल जीत लिया। ड्रामा के अंत में परमात्मा की प्रवेशता तथा अवतरण का वर्णन था जिसमें बताया गया कि परमात्मा से मिलन इस विश्व विद्यालय द्वारा ही हो सकता है।

ड्रामा के बाद डायलॉग तथा डांस आदि हुए। मैं स्टेज से दादी निर्मलशांता जी को संदेश भेजता रहा कि आप स्टेज पर आइये, प्रवचन का कार्यक्रम शुरू करें परंतु दादी नहीं आये और अंत में उन्होंने कहलवाया कि ऊषा को बोलो कि प्रवचन कर दे, मैं बाहर बैठी हूँ। ऊषा जी ने मुझे कहा कि यह कैसे हो सकता है, अभी-अभी तो मैंने ड्रामा में मुख्य पार्ट बजाया है, अभी मैं प्रवचन करने लगूँ तो आये हुए मेहमानों पर क्या प्रभाव पड़ेगा। मैंने ऊषा जी को कहा कि मुझे मालूम नहीं कि दादी निर्मलशांता जी क्यों नहीं आते, मैं भी स्टेज छोड़कर नहीं जा सकता इसलिए आप शिवबाबा को याद करके प्रवचन करें। ऊषा जी ने करीब 45 मिनट बहुत ही सुंदर रीति से प्रवचन किया। कार्यक्रम के अंत में सबको टोली बाँटी और जैसे ही कार्यक्रम समाप्त हुआ, मैं और ऊषा जी दौड़कर दादी निर्मलशांता जी के पास गये और उनसे पूछा कि आप अंदर क्यों नहीं आये? क्या हमसे कोई गलती हुई है, अगर हुई है तो आप बड़ी दिल से हमें माफ कर दें। दादी निर्मलशांता ने हँसते-हँसते कहा कि तुम लोगों ने इतने लोगों को क्यों बुलाया जबकि हॉल में केवल 350 लोगों के ही बैठने की व्यवस्था थी? तब मैंने दादी जी को कहा कि मैंने तो आपको पहले ही कहा था कि आप बड़ा हॉल लीजिये पर आपने 350 की मर्यादित संख्या का ही हॉल लिया। दादी जी ने कहा कि बहुत लोग आये, सब हॉल में जाने के लिए उत्सुक थे, मैं बाहर बैठे-बैठे ही सबको ईश्वरीय संदेश देती रही इसलिए मैं अंदर नहीं आई। बाद में रक्षाबंधन के कार्यक्रम का सेवा समाचार दादी जी ने प्राण प्यारे ब्रह्मा बाबा को भेजा कि इतनी बड़ी संख्या में लोग आये और सब संतुष्ट होकर गये। फिर तो हमने सभी बड़े त्योहारों पर कार्यक्रमों का आयोजन करना शुरू किया और दादी निर्मलशांता जी ने इसमें पूर्ण रूप से सहयोग दिया।

ईश्वरीय सेवा की स्थापना में नाटकों का बहुत बड़ा पार्ट है। शास्त्रों में भी अनेक प्रकार के नाटक लिखे गये हैं तो कहीं डायलाग के रूप में भी

इनकी रचना हुई है। गीतों के रूप में अनुष्टुप छंद के रूप में संस्कृत के श्लोक लिखे गये। ऐसे श्लोक लिखे गये जिसमें आध्यात्मिक संवाद थे जैसे श्रीकृष्ण और अर्जुन का संवाद और उसे गीता का रूप दिया गया। कालीदास, बाणभट्ट ने बहुत अच्छे-अच्छे नाटक लिखे हैं। आठवीं सदी के एक नाटक 'वेणी संहारम्' की पूर्व भूमिका में लेखक ने लिखा है कि वर्तमान समय भारत में आध्यात्मिकता को प्रतिष्ठा दिलाने वाले रामायण तथा महाभारत ग्रंथ इतने लोग पढ़ते नहीं हैं इसलिए ही मैंने यह 'वेणी संहारम्' नाम का नाटक लिखा है और इसमें लोगों को आकर्षित करने के लिए मैंने द्रौपदी वस्त्रहरण का प्रसंग शामिल किया। अंत में उन्होंने माफी भी माँगी कि मैंने इतिहास के वृत्तांतों में परिवर्तन किया है लेकिन मैंने ऐसा इसलिए किया ताकि लोगों में प्राचीन ग्रंथों के प्रति फिर से श्रद्धा निर्माण हो।

भारत के आध्यात्मिक ग्रंथों के बारे में जानकारी रखने वाले यह तो जानते हैं कि महाभारत ग्रंथ का पहले नाम 'जय' था, फिर उसमें कुछ प्रसंग शामिल किये गये और 'विजय' नाम से नया ग्रंथ बना। फिर उससे बड़ा ग्रंथ बना जिसका नाम रखा गया 'भारत'। बाद में महाभारत के रूप में नये ग्रंथ की रचना की गई। ऐसे ही रामायण आदि ग्रंथ बने। इन सभी ग्रंथों का एकमात्र ध्येय था भारतीय संस्कृति और विचारधारा को आध्यात्मिकता का स्वरूप देकर लोगों के जीवन के लिए आदर्श रूप बनाना और इसलिए महाभारत ग्रंथ में 14 गीतायें प्रक्षिप्त रूप में डाली गई हैं।

ईश्वरीय सेवा में नृत्य नाटिकाओं तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों ने बहुत ही अच्छा पार्ट बजाया है। पहली-पहली आबू की पीस कांफ्रेंस में 'शिवरात्रि' नाम से नाटक ओमशान्ति भवन के हॉल में प्रस्तुत किया गया जो बाद में एक हजार से भी ज्यादा स्थानों पर प्रस्तुत हुआ। शुरू के सम्मेलनों में हर वर्ष मुंबई में ड्रामा बनाया जाता था और मुंबई के कलाकार आबू आकर इसे प्रस्तुत करते थे। आज भी नाटक और गीत ईश्वरीय सेवा में काम में आते हैं।

वर्तमान समय दैवी परिवार के नये सदस्यों को तो ये सब चीजें बनी-बनाई मिलती हैं। आदरणीया दीदी मनमोहिनी जी नये भाई-बहनों को कहती थी कि आप सब बनी-बनाई स्टेज पर आये हो। मैंने क्लास में भाई-बहनों से पूछा था कि जब शिवरात्रि ड्रामा पेश हुआ तो किस-किसने देखा था तो पूरी सभा में से 50 से भी कम बहन-भाइयों ने हाथ उठाया, अधिकतर ने नहीं देखा था। तो मेरे मन में यह बात आई कि क्यों नहीं हम नये बहन-भाइयों के लिए पुराने नाटकों को फिर से दैवी परिवार के सामने रखें। जैसे आजकल दुनिया में भी रिवाज है कि पुरानी श्रेष्ठ फिल्मों का रिमेक (पुन: निर्माण) करके नये दृष्टिकोण से उसे प्रस्तुत किया जाता है।

सांस्कृतिक कार्यक्रमों की भी ईश्वरीय सेवा में बहुत ज़रूरत है, इस बात की महसूसता 1961 से हुई तथा बॉम्बे और भारत के अन्य सेवाकेन्द्रों पर भी सांस्कृतिक कार्यक्रमों तथा नृत्य नाटिकाओं द्वारा ईश्वरीय सेवाओं की शुरूआत हुई। उसके परिणामस्वरूप काफी लोग हमारे कार्यक्रमों तथा प्रवचनों में शामिल होने लगे और नये-नये स्थानों पर सेवाकेन्द्र खुलते गये तथा उन्हें संभालने के लिए कई बहनों ने अपने जीवन समर्पित किये। इस प्रकार ईश्वरीय सेवा की गति भी बढ़ी तथा प्रगति भी सुंदर हो गई। परंतु फिर भी साकार मुरलियों में ब्रह्मा बाबा के दिल के उद्‌गार आते रहे कि जो भी ईश्वरीय सेवा के साधन हैं, उनसे विहंग मार्ग की सेवा नहीं हो रही है। बाबा ने एक बार मुरली में कहा कि मुझे ऐसा कोई राइट हैण्ड बच्चा नहीं मिला है जो ईश्वरीय सेवा को विहंग मार्ग की सेवा बनाये। विहंग मार्ग की सेवा क्या हो सकती है, उसके बारे में अगले लेख में अपना अनुभव लिखूँगा। परंतु उससे पहले आपके विचार जानने की इच्छा है।

हमारे ड्रामा में बहुत अच्छे-अच्छे गीत हैं इसलिए मेरा अंत में यही सवाल है कि क्या हम अपने पुराने ड्रामा को रिमेक करके ईश्वरीय सेवा के सफल आयोजन में निमित्त बनायें और उन्हों के द्वारा वर्तमान की ईश्वरीय सेवा में चार चांद लगाकर उज्ज्वल भविष्य की नींव डालें? ❖

'पत्र' संपादक के नाम

'ज्ञानामृत' पत्रिका अत्यंत ज्ञानवर्धक और मार्मिक है। मई 2012 अंक में 'आत्मा की आवाज़ का आदर करें, इसी वक्त छोड़ें तम्बाकू', 'एक पैगाम-युवाओं के नाम' लेख वर्तमान में भटक रही युवा पीढ़ी के लिए पर्याप्त प्रेरणा का कार्य करेंगे। लेख 'परखने की शक्ति' में सत्यता एवं पवित्रता का महत्त्व उदाहरणों द्वारा स्पष्ट किया गया, जिससे बहुत ही प्रभावित हुआ। 'जीभ पर संयम' तथा संपादकीय 'जैसा कर्म वैसा फल' विशेष प्रभावित करने वाले हैं। मैं बार-बार पत्रिका को पढ़ता हूँ, मुझे मानसिक शांति का अनुभव होता है। ज्ञानामृत पत्रिका विशेषकर विद्यार्थियों एवं शिक्षकों के लिए प्रेरणादायी है।

– नाथूराम गर्ग, जैसलमेर

जून अंक में 'ईश्वरीय सेवा में सर्मपण समारोह की आवश्यकता' पढ़कर बहुत ही आश्चर्य हुआ। परमपिता परमात्मा ने सृष्टि पर दिव्य अवतरण ले ईश्वरीय विश्व विद्यालय की स्थापना की। वास्तव में वह समय कितना कठिन होगा जब यह संस्था प्रारम्भ हुई होगी। कितना त्याग इस संस्था को चलाने में किया गया होगा। कोटि-कोटि नमन है। आज इस द्वारा 137 देशों में केन्द्र चलाये जा रहे हैं। 'मैं और मातेश्वरी', 'दशा सुधरे दिशा बदले' आदि लेखों को पढ़कर, मैं 'ज्ञानामृत' से प्रभावित हुआ हूँ और समाज का मार्गदर्शन करने के लिए मैं ज्ञानामृत परिवार को नमन करता हूँ।

– सुनील कुमार दाधीच,
बून्दी (राजस्थान)

दुनिया भर की पत्र-पत्रिकाओ में ज्ञानामृत पत्रिका का बड़ा महत्व है क्योंकि ज्ञानामृत में है ईश्वरीय ज्ञान। जो ईश्वरीय ज्ञान को समझता है, नर से श्री नारायण और नारी से श्री लक्ष्मी पद प्राप्त करता है। ज्ञानामृत को पढ़ने वाले का जीवन ही बदल जाता है, उसके लिए पुण्य कर्म के रास्ते खुल जाते हैं इसलिए भाइयो, बहनो, ज्ञानामृत खूब पढ़ो और पढ़ाओ।

– ब्र.कु.हरिप्रसाद शर्मा,
खिलचीपुर, राजगढ (म.प्र.)

अप्रैल, 2012 अंक का अवलोकन, पठन, मनन, जीवन में आचरण कर अतीन्द्रिय आनंद की अनुभूति हुई। 'संजय की कलम से' पढ़कर यह धारणा दृढ़ हुई कि हमसे दुर्व्यवहार करने वाले व्यक्ति की झोली सुख से भर देनी चाहिये क्योंकि वह मानसिक संतुलन खो चुका है। 'ज़िम्मेवारी' सम्पादकीय लेख में आपने जीवनोपयोगी, व्यवहारिक अनमोल विधियों का वर्णन किया है। सबसे ज्यादा ज़िम्मेदारी, सबसे ज्यादा हलके। ज़िम्मेवारी उठाने से कइयों की दुआएं मिलती हैं, भाग्य भी बनता है। हम पद्मापद्म भाग्यशाली हैं जो हमें ज्ञानामृत के माध्यम से दादी जी के उत्तर मिलते हैं। ब्र.कु. रमेश शाह जी का लेख अत्यंत प्रेरणादायी है। 'जीभ पर संयम' में जीवन में उतारने योग्य बातें लिखी हैं जैसे कि विवाद से हल नहीं, हलाहल निकलता है। सहसम्पादिका बहन के लेखों में उनके अध्ययन, मनन एवं चिन्तन की गहरी छाप दृष्टिगत होती है। उनमें जीवन को रूपान्तरित करने की क्षमता है। 'आन्तरिक शक्तियों का जागरण' लेख सराहनीय है। आन्तरिक शक्तियों से मानव कल्याण के चमत्कारिक कार्य सम्पन्न हो सकते हैं। समाने और माफ करने की शक्ति, भूल को भुलाने और स्वयं की सावधानी बढ़ाने की शक्ति, घटना पर फुलस्टाप लगाकर आगे देखने की शक्ति जीवन को लाभान्वित कर देती हैं। लेख 'शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य' व्यवहार में लाने योग्य है।

– ब्र.कु. श्रीधर, कोदरिया, महू

मई अंक के सम्पादकीय 'जैसा कर्म वैसा फल' ने मन को झकझोर कर रख दिया। बीती से शिक्षा लें, पश्चाताप न करें, मन को धो डालिये ईश्वरीय स्मृति से आदि बातें ज्ञानवर्धक ही नहीं, अत्यंत रोचक भी लगीं।

– सुनील निगम,
आलोट, रतलाम(म.प्र.)

रक्षा सूत्र – प्रेम के विस्तार का सूत्र

● ब्रह्माकुमारी उर्मिला, शान्तिवन

रक्षा सूत्र पर्व का दूसरा नाम है रक्षा बंधन। ऐसा बंधन जो रक्षा करे। प्रश्न उठता है कि रक्षा किससे चाहिए? आज न जंगली जानवरों का भय है, न आक्रमणकारियों का, न कंस, रावण आदि राक्षसों का, फिर रक्षा किससे चाहिए? हमें रक्षा चाहिए निर्लज्जता से, चमड़ी-दमड़ी के आकर्षण से, स्वच्छंदता से, नफरत, अविश्वास, भय से, काम, क्रोध, अहंकार आदि शत्रुओं से।

प्रेम फैलकर सरोवर बन जाता है

प्रेम जब आत्मा के स्त्रोत से बहता है तो पूर्ण शुद्ध होता है। जब स्त्रोत छोड़ सीमा में आ जाता है, संकुचित हो जाता है, स्वार्थ से सन जाता है, कामना से कलंकित हो जाता है। विकार बाहर से नहीं आये, प्रेम ही जब सड़ने लगा तो विकार बन गया। पानी जब ऊपर से बरसता है तो स्वच्छ होता है, भूमि पर आकर किसी गड्ढे में रुक जाता है तो कुछ ही दिनों बाद सड़ने लगता है। हमारा प्रेम भी हद के परिवार के गड्ढे में बंद हो जाता है, स्वार्थ की मिट्टी में मिल जाता है, कामना के कीचड़ से भर जाता है, तो उसमें दुर्गंध आने लगती है। प्रेम यदि फैल जाता है तो परिवार रूपी गड्ढे के बजाय सरोवर बन जाता है, उसमें कमल खिल जाते हैं और उसमें हंस आ जाते हैं। सीमित प्रेम ही तो काम बना, कामना पूरी न हुई तो क्रोध बना। वस्तुओं की आसक्ति लोभ बन गई, परिवार का राग, मोह बन गया। ऐसे विकृत प्रेम को निर्मल करने के लिए आत्म भाव चाहिए।

विश्व एक परिवार है

रक्षाबंधन पर्व आत्म-भाव जागृत करने का पर्व है। शरीर के भीतर रहने वाली हम सभी आत्मायें मूल रूप और मूल गुणों में समान हैं। एक पिता के बच्चे, एक ही घर से आये हैं, एक ही रंगमंच पर पार्ट बजा रहे हैं। हमारा खून, पसीना और आँसू, हमारी खुशी और गम की अनुभूतियाँ समान हैं, हम एक हैं, सारा विश्व एक परिवार है। वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना में भिगोकर हर कर्म और व्यवहार करें, इसका नाम है रक्षाबंधन।

बढ़ाएं प्रेम के दायरे को

जब प्रेम का विस्तार होता है, हम सुरक्षित हो जाते हैं और जब नफरत का विस्तार होता है तो हम असुरक्षित हो जाते हैं। तो आइये, इस रक्षाबंधन पर अपने प्रेम का विस्तार करें। अब तक हमारे प्रेम के दायरे में जितने भी लोग थे, उनमें कई और जोड़ लें। यदि हम हर रक्षाबंधन पर प्रेम के दायरे को बढ़ाते जायेंगे तो एक दिन सारा विश्व ही हमारे प्रेम के दायरे में समा जायेगा।

धागा है मर्यादा और पवित्रता का प्रतीक

आज तो इस त्योहार का अर्थ इतना साधारण कर दिया गया है कि इसे भाई द्वारा बहन को कुछ पैसे या सौगात देने का प्रतीक मात्र मान लिया गया है। कहीं-कहीं तो यह पैसा और सौगात भी प्यार बढ़ाने के स्थान पर मार अर्थात् मनमुटाव बढ़ाने का साधन बन जाते हैं। बेहद अर्थ वाले इस पर्व को इस तरह हद की भावनाओं से जब मनाया जाने लगता है तो परमात्मा पिता स्वयं अवतरित हो इसका सच्चा महात्म्य समझाते हैं और पर्व के पीछे छिपी शक्ति और ज्ञान की पहचान देकर मानव मात्र को पावन, बंधनमुक्त और गुणमूर्त बनाते हैं। रक्षाबंधन पर्व पर बहनें, भाई की कलाई पर एक पतला धागा बाँधती हैं (आजकल रंगबिरंगी राखियाँ इस पर्व का आधुनिकीकरण हैं)। जैसे

यादगार ग्रंथ रामायण में दिखाते हैं कि सीता, एक तिनके की ओट से रावण जैसे राक्षस के कोप और हिंसा से बच गई। तिनका क्या था, धर्म का प्रतीक, सीता के अखण्ड ब्रह्मचर्य और सतीत्व का प्रतीक। इसी प्रकार कलाई पर बँधा धागा भी मर्यादा का, पवित्रता का और प्रतिज्ञा का प्रतीक है।

धागा है कामान्तक, क्रोधान्तक ...शस्त्र

तिनका अपने आप में कुछ नहीं पर सीता जैसी ताकतवर आत्मा ने उसे हाथ में उठाया तो वह शक्तिशाली बन गया। इसी प्रकार यह धागा भी अपने आप में कुछ नहीं है परंतु जब कोई ऐसी पावन आत्मा जिसके मन पर विषय-वासना का कुठाराघात न हो, क्रोध की कालिमा न हो, लोभ का दलदल न हो, मोह का अंधकार न हो, अहंकार का आवरण न हो, ईर्ष्या, द्वेष, कामनाओं का कीचड़ न हो – इसे दूसरे की कलाई पर बाँधती है तो यह कामान्तक, क्रोधान्तक, लोभान्तक ... शस्त्र का काम करता है। ब्रह्माकुमारी बहनें, ऐसी ही पावन बहनें हैं जो इस विकारी संसार में कमलवत् जीवनयापन करती हैं। ये बहनें, रक्षाबंधन के पावन पर्व पर बिना किसी जाति, धर्म, कुल, रंग, भाषा के भेद के मानव मात्र को नि:शुल्क यह धागा बाँधती हैं।

धागे में समाई है पवित्र प्रतिज्ञा

यह धागा एक प्रकार की पवित्र प्रतिज्ञा है परमात्मा के साथ। बाँधने वाला तो पहले ही प्रतिज्ञाबद्ध है और बँधवाने वाला भी, उसी प्रतिज्ञा में, मर्यादा में बद्ध हो जाता है। **वह दृढ़ संकल्प करता है कि जिस त्यागी, तपस्वी ब्रह्मचारिणी बहन को माध्यम बनाकर भगवान शिव ने मुझे यह धागा बाँधा है, मैं उसकी बताई श्रीमत पर अवश्य चलूँगा। किसी भी परिस्थिति में धागे की मर्यादा को मलीन नहीं होने दूँगा। आत्मा में किसी भी मनोविकार का संकल्प भी प्रवेश नहीं होने दूँगा। प्रवेशता के सभी द्वारों (इन्द्रियों) पर कड़ा पहरा लगाकर उन्हें कमलवत् बनाकर ही रहूँगा। मन ही मन बार-बार दोहराई जाने वाली यह प्रतिज्ञा ही अदम्य मनोबल का काम करती है** क्योंकि मन इसमें बिजी हो जाता है और विकारों तथा व्यर्थ से छुटकारा पा जाता है। कलाई पर बाँधे गये इस छोटे-से बंधन का अर्थ है आत्मा मनोविकारों से रक्षा की प्रतिज्ञा में बँध गई। जब तक प्रतिज्ञा है, रक्षा भी है। प्रतिज्ञा टूटी तो रक्षा भी नहीं रहेगी।

तिलक और मिठाई का रहस्य

धागा बाँधने के साथ-साथ इस प्रतिज्ञा को मजबूती प्रदान करती है मिठाई। भगवान का प्रेम मिठास भरा है, उस मिठास में भूतकाल की सब कड़वाहटें भुलाई जा सकती हैं। मुख मीठा करना अर्थात् मन, वचन, कर्म को मीठा बनाना।

रक्षासूत्र बाँधा जाता है हाथ में पर परिवर्तन की सारी प्रक्रिया का केन्द्र तो आत्मा है। अत: आत्मा को जागृत करना, उसे उसकी शक्तियों और पवित्रता का अहसास कराना भी उतना ही जरूरी है। आत्मा तक पहुँच बनाने का साधन है तिलक। मस्तक पर चन्दन का तिलक लगाकर हम युगों से तप्त (जलती हुई) आत्मा को शीतल करते हैं और उसे उसके स्वमान में टिकाते हैं। मस्तक, मुख और कलाई – इन तीनों को आधार बनाकर हम यही संदेश देते और लेते हैं कि पवित्रता आत्मा का स्वधर्म है, पवित्रता ही सुख-शान्ति की जननी है अत: पवित्र बनो, योगी बनो। ❖

जे.वाटूमल ग्लोबल हॉस्पिटल एण्ड रिसर्च सेन्टर
माउंट आबू में
पथरी तथा पेशाब संबंधी
बीमारी (यूरोलॉजी) ऑप्रेशन सुविधा
निम्न लक्षण वाले रोगी संपर्क करें:-
- गुर्दे, मूत्रनली एवं मूत्राशय की पथरी
- पेशाब की थैली में पथरी
- पेशाब में रुकावट एवं प्रोस्टेट सर्जरी
- जन्मजात मूत्र संबंधी रोग (हाइपोस्पेडियास)
अधिक जानकारी हेतु संपर्क करें – 09413775349

दादी जी के साये में बिताये हुए पल

● ब्रह्माकुमार आत्म प्रकाश, आबू पर्वत

निराकार शिव बाबा ने प्यारे ब्रह्मा बाबा को अपना साकार माध्यम बना कर नारी उत्थान और जन-जागरण का जो कार्य आरम्भ किया, दादी प्रकाशमणि उसकी अग्रदूत बनी। दादी जी का जीवन अनेक विशेषताओं से भरपूर था। जहाँ एक ओर वात्सल्य और स्नेह की वे देवी थीं तो वहीं दूसरी ओर कायदे-कानून का स्वयं भी पूर्ण पालन करने वाली और दूसरों से भी कराने वाली थीं।

दादी जी का जीवन एक ऐसी खुली हुई पुस्तक के समान था जिसे जो जितना पढ़े उतना ही पाये। वे प्रशासन कला में भी पारंगत थीं तो साथ-ही-साथ पारिवारिक गुणों से भी ओत-प्रोत थीं। फलस्वरूप दादी माँ ने सबके दिल पर अपनी अमिट छाप छोड़ी। यज्ञ से दादी जी का जिगरी प्यार था, वे यज्ञ की छोटी-से-छोटी चीज़ की भी पूरी संभाल करती थीं।

दादी जी जिसके भी साथ मिलती, जो रोल प्ले करती उसमें पूरी तरह रम जाती थीं। तभी तो मधुबन में आने वाले छोटे-बड़े सभी कहते थे, दादी तो हमारी दादी माँ है, कुमार कहते हमारी दादी कुमारिका है। टीचर बहनें कहतीं, दादी तो हमारी रोल मॉडल है, गृहस्थी कहते, दादी से तो हम प्रेरणा व शिक्षा प्राप्त करते हैं। ऐसी विभिन्न गुणों और शक्तियों से सम्पन्न दादी की जितनी भी महिमा की जाए, कम ही होगी।

समर्पण की प्रेरक

बात सन् 1976 की है, मैं अपने लौकिक घर नागपुर से मधुबन में सेवाधारी के रूप में आया हुआ था। एक दिन मधुबन निवासियों के साथ दादी जी पिकनिक मनाने गये और सौभाग्यवश मुझे भी साथ जाने का अवसर मिला। पिकनिक के दौरान मैंने देखा कि दादी जी कैसे सभी भाई-बहनों के साथ खेलपाल कर रही हैं, कैसे सबको अलौकिक प्यार और दुलार से भरपूर कर रही हैं। यह नज़ारा मेरे दिल को अन्दर तक छू गया और उसी समय मैंने सोचा कि जीवन हो तो ऐसा। मधुबन में समर्पण की प्रेरणा मुझे उसी घटना से मिली।

जब मैंने दादी जी को समर्पण होने की दिल की बात बताई तो दादी जी ने कहा कि तुमने तो एम.एस.सी. स्वर्ण पदक के साथ पास की है और यहाँ तो मधुबन में स्थूल सेवा है, तुम नागपुर में सेन्टर पर रहकर वी.आई.पी. सेवा करो तो ज़्यादा अच्छा रहेगा। लेकिन मुझे तो एक ही लग्न थी कि मुझे बाबा के बेहद घर में सेवा करके अपनी स्थिति को श्रेष्ठ बनाना है। अंततः दादी जी ने मेरे सेवा भाव को, धारणा युक्त जीवन को और सादगी को देखकर मुझे मधुबन निवासी बनने का सुनहरा मौका दे ही दिया।

ब्रह्मा बाप समान पारखी

मेरे समर्पण के थोड़े समय बाद लौकिक बड़े भाई (ज्ञानेश्वर जी, वर्तमान समय पाण्डव भवन में बाबा के भण्डारे में सेवारत) ने कहा कि मैं भी कुमार हूँ और घर में केवल माता-पिता ही हैं, तो क्यों न हम सभी लोग बाबा की बेहद की सेवा में अपना जीवन सफल करें। उन दिनों हमारे परिवार के ये सदस्य समय-प्रति-समय मधुबन में सेवार्थ आते रहते थे। एक दिन अचानक दादी जी ने मुझे बुलाकर कहा कि आत्म, क्यों अपने माता-पिता और भाई को आने-जाने की तकलीफ देते हो, इससे तो अच्छा होगा कि ये सभी भी मधुबन में रहकर ही बाबा की सेवा करें। ऐसे बड़े दिल से दादी जी ने उनको भी समर्पित होने की स्वीकृति दे दी। तत्पश्चात् 1982 में लौकिक कारोबार को समेट कर माता-पिता और बड़े भाई भी बेहद यज्ञ-सेवा में जुड़ गये। इसे दादी जी की रहमदिली कहें या दूरदर्शिता कहें। सचमुच दादी जी तो ब्रह्मा बाप समान पारखी थीं।

यज्ञ-वत्सों की पूरी संभाल

विभिन्न प्रकार की पालना देने के

साथ-साथ कई बार दादी जी अचानक अमृतवेले के समय किसी भाई अथवा बहन को भेज कर यह चैक कराती थीं कि कोई बाबा का बच्चा योग के समय नींद तो नहीं कर रहा है? ऐसे ही प्रात: मुरली की क्लास के समय भी दादी जी चैक कराती कि कोई मुरली मिस तो नहीं कर रहा है? बाद में, जो भाई-बहनें अमृतवेले में ढीले होते अथवा मुरली मिस करते, उन्हें दादीजी बुलाकर बड़े प्यार से शिक्षा-सावधानी देती। वास्तव में दादी जी की यही चाहना रहती कि हरेक ब्रह्मा-वत्स अपनी स्थूल तथा सूक्ष्म उन्नति करके, आगे बढ़ता रहे और दूसरों को भी आगे बढ़ाता रहे। वे सबको यह महसूस कराती थीं कि सेवा के साथ-साथ, योग और मुरली ब्राह्मण जीवन की उन्नति के आधार स्तम्भ हैं।

अनुपम पारिवारिक प्रेम

दादी जी मधुबन में ब्रह्मा भोजन का मीनू बनाते समय यह ख्याल रखती थीं कि ब्रह्मा-वत्सों को संतुलित आहार मिले। कई बार भोजन के समय स्वयं चक्कर लगाकर यह देखती थीं कि सभी को ठीक से भोजन मिला है? भोजन में कोई कमी तो नहीं है? यह दादी का यज्ञ-वत्सों के प्रति मातृत्व स्नेह था। सीज़न का पहला फल भाई-बहन प्यार से लेकर आते थे तो दादी जी सदैव यह कहती थी कि पहले यह फल सभी ब्रह्मा-वत्स खायें तभी दादी खायेगी। इससे सिद्ध होता है कि दादी माँ के दिल में बच्चों के लिए कितनी ममता थी।

समदर्शी भावना

सन् 1996 की बात है। मेरा एक छोटा-सा ऑपरेशन हुआ था, मैं उस दौरान डॉक्टर की देखभाल में ओम निवास में रह रहा था। एक दिन दादी जी स्वयं मुझसे मिलने के लिए ओम निवास आ गईं तथा साथ में फल भी लेकर आईं। दादी जी ने मेरे पास बैठकर हाल-चाल पूछा तथा कहा, फिकर न करो, बाबा तुम्हें जल्दी ठीक कर देगा। दादी जी ने मुझे पॉवरफुल दृष्टि भी दी। सचमुच मैं उस समय भाव-विभोर हो गया तथा मेरी आँखों से अश्रुधारा बहने लगी। वह दृश्य अभी तक भी भुलाने से भी नहीं भूलता है। मैंने मन में सोचा कि इतना ख्याल तो कोई लौकिक सम्बन्धी भी नहीं कर सकता है। दादी जी इतने बड़े यज्ञ के प्रमुख हैं, इतने व्यस्त हैं लेकिन फिर भी मुझसे मिलने आये हैं और यह केवल मेरा ही अनुभव नहीं है, सभी भाई-बहनों ने ऐसे अनुभव दादी जी के साथ किये हैं। दादी जी कभी भी छोटे-बड़े का भेदभाव नहीं करती थीं और सभी भाई-बहनों को परिवार का सदस्य समझती थीं।

कुमारों की दादी कुमारिका

दादी माँ का कुमारों से बेइंतहा अनुराग था। कुमारों को देखकर दादी जी फूले नहीं समाते थे। एक बार मैंने ज्ञानामृत पत्रिका के लिए साक्षात्कार लेते समय पूछा कि दादी जी आपको कुमारों से इतना प्यार क्यों है? तो दादी माँ ने कहा, इन्होंने बाबा को अपना जीवन दिया है। ये हर समय बाबा की सेवा में बिज़ी रहते हैं इसलिए इनकी पालना मधुबन बाबा के घर में तो ज़रूर हो। जब योग-भट्ठी के लिए कुमार आते तो दादी उनके लिए समोसे, गुलाब जामुन, गोल-गप्पे आदि बनवा कर बहुत खातिरी करती थीं। दादी जी कहती, ये सभी बाबा के लाडले कुमार बाहर की बनी चीज़ें तो खाते नहीं हैं तो इन्हें यह सब बाबा के घर से तो अवश्य मिलना चाहिए? ये सब बाबा के घर से संतुष्ट होकर जायेंगे तो यज्ञ की बहुत सेवा और संभाल करेंगे। दादी जी कुमारों से कहती थीं कि टी.वी. (टेलीविजन) तो टी.बी. की बीमारी है और सिनेमा, सिन (पाप) की माँ है। दादी कुमारों को संगदोष से बचने तथा गलत साहित्य न पढ़ने की सावधानी भी देती थीं। मैंने देखा कि दादी जी की यही शुभ भावना होती कि हरेक कुमार – आदर्श कुमार, तपस्वी कुमार, सनत कुमार और बाबा का सपूत कुमार बन जाये।

निरहंकारिता की प्रतिमूर्ति

एक बार मधुबन में संत सम्मेलन में महामण्डलेश्वर आये हुए थे। एक बहुत बड़े संत ने सभा में अपना अनुभव सुनाते हुए कहा कि किसी भी संस्था के

प्रमुख से मिलने के लिए पहले से समय लेना पड़ता है लेकिन यहाँ ब्रह्माकुमारीज़ में मैंने दूसरा ही स्वरूप देखा। यहाँ तो दादी जी से कोई भी, कभी भी सरलता और सहजता से मिल सकता है। यहाँ कोई औपचारिकता अथवा छोटे-बड़े का भेद नहीं है। मैं स्वयं जब दादी जी से मधुबन के प्राँगण में मिला तो दादी का स्नेह और आत्मीयता देखते ही बनती थी।

मैंने खुद भी देखा कि दादी जी से मिलने के लिए कोई दीवार नहीं थी। यज्ञ कारोबार के विषय में कोई भी भाई-बहन दादी जी के पास कभी भी जा सकता था। दादी जी अपना आराम का समय भी त्याग कर हरेक के साथ सलाह-मशविरा करती थीं। सभी को साथ लेकर चलती थीं। यह दादी जी की नम्रता और निश्छलता का सबूत है।

रहमदिल और दाता

एक बार पंजाब से एक स्कूली बस आबू दर्शन के लिए आई हुई थी। कोई कारण से बस पाण्डव भवन के पास खाई में गिर गई, कई बच्चों को चोटें आईं। जैसे ही दादी जी को पता लगा तो उन्होंने मधुबन निवासियों को खास मदद के लिए भेजा। सब बच्चों को पाण्डव भवन में बुलाकर दवाई कराई, सबका हाल-चाल पूछा और बच्चों को भोजन भी कराया। ऐसे ही भुज (गुजरात) में भूकम्प के समय दादी जी ने मधुबन से तुरन्त राहत

सामग्री और डॉक्टरों का दल पीड़ितों की मदद के लिए भेजा। दादी जी मधुबन में काम करने वाले मजदूरों को भी समय-समय पर बाबा के घर का भोजन खिलातीं, उन्हें सौगातें देती और उनके परिवार का भी ध्यान रखती। दादी जी दूसरों के दु:ख-दर्द को महसूस करके सदैव उन्हें यथा सम्भव सहयोग देने के लिए तत्पर रहते थे।

प्यारी दादी जी की पुण्य तिथि के अवसर पर हम सभी ब्रह्मा-वत्सों का यह कर्त्तव्य है कि दादी के पद-चिह्नों पर चलकर बाबा को प्रत्यक्ष करें। जन-जन तक हम यह पैगाम पहुँचा दें जो हरेक के दिल से निकले कि मेरा बाबा आ गया। सदा मुस्कराना, ब्राह्मण परिवार में मिलनसार होकर रहना, यज्ञ के लिए मर-मिटना, विशाल हृदयी बनना आदि गुणों को अपने जीवन में लाना ही हम सबकी दादी जी के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी। ❖

ग्लोबल हॉस्पिटल में महत्त्वपूर्ण चिकित्सा सर्जरी कार्यक्रमों की जानकारी

घुटने व कूल्हे के जोड़ प्रत्यारोपण सर्जरी सुविधा
(Regular Knee and Hip Replacement Surgery)
दिनांक : 28, 29, 30, 31 अगस्त
सर्जरी : डॉ. नारायण खण्डेलवाल, मुम्बई से कुशल व अनुभवी सर्जन
(Trained in U.K., Australia and Germany)
पूर्व जाँच के लिये केवल घुटने व कूल्हे के ऑपरेशन के इच्छुक रोगी संपर्क करें –
डॉ. मुरलीधर शर्मा, ग्लोबल हॉस्पिटल, फोन नं. 09413240131
फोन: (02974) 238347/48/49 **वेबसाइट:** www.ghrc-abu.com
फैक्स: 238570 **ई-मेल:** drmurlidharsharma@gmail.com

स्वतंत्रता दिवस पर विशेष...

सत्य, अहिंसा और ब्रह्मचर्य से मिलेगी सच्ची स्वतंत्रता

● ब्रह्माकुमार दिनेश, हाथरस

भारतवर्ष के स्वतंत्रता संग्राम में हज़ारों जाने-अनजाने वीरों-वीरांगनाओं के नि:स्वार्थ बलिदान के बाद मिली स्वतंत्रता के 65 वर्ष पूरे हो रहे हैं लेकिन लोगों के ठंडे पड़ते जोश को देखकर लगता है जैसे कि उनके लिए आज़ादी बुजुर्ग हो गई है। तिरंगा फहराना और नारा लगाना भी औपचारिकता मात्र है, इन कार्यक्रमों में भी सभी नहीं पहुँचते। अब वह जोश और जुनून कहाँ? नई पीढ़ी की आज़ादी को देखकर तो ऐसा प्रतीत होता है कि शायद ही यह मुल्क कभी गुलाम हुआ होगा।

स्वतंत्रता के नाम पर स्वच्छंदता

इस देश ने आज़ादी के 65 वर्षों में बहुत कुछ पाया है तो गंवाया भी कम नहीं है। अधिकारों की स्वतंत्रता तो मिली लेकिन स्वच्छंदता बढ़ती ही गई जिस पर नियंत्रण होना चाहिये था। अपराधी दोहरा चेहरा लगाये स्वच्छंद घूम रहे हैं। मौलिक अधिकारों पर जब आँच आती है या छिनते हैं तो हम चिल्लाते हैं लेकिन अपने मौलिक कर्त्तव्य कौन-कौन से हैं, उनका तो इस स्वतंत्र देश के बहुत-से नागरिकों को पता तक नहीं है। क्या हम केवल स्वच्छंदता चाहते थे या सच्ची स्वतंत्रता?

परतंत्रता मनोविकारों की

आज का मानव काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार के वशीभूत स्वच्छंद होकर दूसरों की स्वतंत्रता को हानि पहुँचा रहा है। **आज़ाद मुल्क में रहने के बाद भी अपने मनोविकारों से स्वयं को मुक्त नहीं कर पाया है। वास्तव में यही है सबसे बड़ी परतंत्रता। इस परतंत्रता को हटाकर सच्ची स्वतंत्रता दिवस मनाने की आवश्यकता है। पाँच और छह फुट का इंसान गुलाम है तीन इंच की बीड़ी तथा सिगरेट का, तंबाकू, शराब, कबाब, जुआ, गंदे सिनेमा आदि का। पिंजरे में फड़फड़ाते पंछी की तरह**

विकारों में फँसे इंसान को स्वतंत्रता कहाँ? अहंकार की दलदल में धंसे व्यक्ति को आजादी कहाँ? लोभ के वश दूसरों के माल पर जाल बिछाने वाले को स्वतंत्रता कहाँ?

जिस देश में नारी पूज्या स्वरूप में थी आज उसी देश में उसकी अस्मिता तार-तार हो रही है। नारी भी क्षणिक लोभ के लिए फिल्मों और विज्ञापनों के माध्यम से जिस स्तर पर आ गई है, आज से पहले ऐसी स्थिति कभी नहीं बनी। यहाँ भी नारी स्वतंत्रता का जामा पहनकर उसकी स्वतंत्रता, स्वच्छंदता में बदल गई है। पच्चीस वर्ष तक ब्रह्मचर्य और योग की शिक्षा देने वाले इस पुरातन देश में आज आवश्यकता महसूस की जा रही है यौन शिक्षा की। क्यों नहीं नई पीढ़ी को ब्रह्मचारी जीवन जीने की शिक्षा दी जा रही, जिससे बचाया जा सके उसे गर्त में गिरने से। नारी स्वतंत्रता मिलने के बाद भी क्यों नहीं पैदा हो रहे राम और कृष्ण, विवेकानन्द और आजाद?

प्रथम है आत्म कर्त्तव्य

अंग्रेज तो इस देश को दो देशों में बाँटकर चले गये लेकिन आज हम इतने वर्षों बाद भी धार्मिक, राजनैतिक और भाषागत रूप में एक नहीं हो पाये। मातृभाषा हिन्दी अभी तक सही अर्थों में राष्ट्रभाषा बनने के लिए व्याकुल है

अपने ही देश के विभिन्न अंचलों में। इससे ज्यादा शर्मनाक क्या होगा कि कई स्थानों पर तो राष्ट्रगान, वंदे मातरम् अथवा सरस्वती वंदना का भी विरोध होता है। स्वयं की ही कर्मेन्द्रियों पर राज्य नहीं परंतु नारा है, स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। हमारे नैतिक कर्त्तव्यों में संविधान के अनुसार पहला कर्त्तव्य है, आत्म कर्त्तव्य, इसमें अपनी शारीरिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति के लिए कहा गया है। अब आत्मिक उन्नति कैसे हो? उसके लिए चाहिए परमपिता शिव परमात्मा का प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा दिया गया सत्य गीता ज्ञान, जिससे होगी आत्मा की पहचान, परमात्मा के सत्य स्वरूप का ज्ञान, आत्मिक शक्तियों और गुणों का ज्ञान, सृष्टि के आदि-मध्य-अंत की पहचान, इतिहास और भूगोल तथा संसार रूपी कल्पवृक्ष का ज्ञान। आत्मिक शक्तियों की अनुभूति से होगा आत्म-उत्थान जिसके लिए लड़ना पड़ेगा फिर से अहिंसात्मक स्वतंत्रता संग्राम।

ज़रूरत है सत्य, अहिंसा और ब्रह्मचर्य की

विदेशी शासन को उखाड़ फेंकने के लिए गांधी जी ने सत्य, अहिंसा और ब्रह्मचर्य को साथी बनाया। आक्रांता बाबर ने भी लड़ाइयाँ जीतने के लिए सैनिकों को शराब न पीने और व्यभिचर से दूर रहने की प्रतिज्ञा कराई थी। अब पूरी धरा से ही भ्रष्टाचार और विकारों को भगाने के लिए और इस आंतरिक युद्ध को जीतने के लिए सत्य, अहिंसा और ब्रह्मचारी जीवन की ज़रूरत है। यह शिक्षा देने वाला कोई मनुष्य नहीं बल्कि स्वयं परमपिता शिव परमात्मा हैं। जब विकारों से लड़ाई जीती जायेगी तब ही मिलेगी सच्ची स्वतंत्रता। ❖

श्रेष्ठ स्मृति की कमाल

ब्रह्माकुमारी अमिता, इंदौर (प्रेम नगर)

एक संन्यासी को एक बार एक सेठ ने नौकरी पर रख लिया। सेठ ने कहा, महाराज, यह दुकान है, कहीं ऐसा न हो कि आपकी साधना बिगड़ जाये। संन्यासी ने कहा, बिगड़ने का डर होता तो नौकरी स्वीकार न करता। लेकिन, ध्यान रखना, मेरे साथ आप ना बदल जायें। सेठ हँसा और बोला, फिक्र न करो, हम धंधे में काफी होशियार हैं।

संन्यासी दुकान पर बैठने लगा। साल भर बीत गया तो संन्यासी ने कहा, अगले वर्ष मेरा इरादा तीर्थ यात्रा पर जाने का है, आप भी चलें। सेठ ने कहा, इसके लिए तैयारी क्या करनी होगी? संन्यासी ने कहा, कोई ज्यादा तैयारी नहीं, जो करना है, मैं करवाता रहूँगा।

इतने दिनों के साथ से संन्यासी, सेठ की चालबाजियों से परिचित हो गया था। जब भी सेठ कुछ कम चीज़ तौलने लगता तब संन्यासी कहता, राम-राम, तीर्थयात्रा पर चलना है। सेठ जी का मन चौंक जाता, हाथ ठहर जाता और वह सही तौल करने लगता। थोड़ी देर बाद वह कुछ ज़्यादा दाम किसी को बताने लगता तो संन्यासी फिर कहता, ओम! तीर्थयात्रा पर चलना है। इस प्रकार साल भर से सेठ बेईमानी न कर पाया। जब वे तीर्थयात्रा पर चलने लगे तो सेठ ने कहा, तीर्थ तो पूरा हो गया, मैं पवित्र हो गया पर आपने भी खूब किया। तीर्थयात्रा के बहाने सालभर स्मृति का तीर चलाते रहे। कारोबार करने का तरीका ही बदल गया।

इस बोधकथा का सार यह है कि बार-बार अच्छी बात सुनने से मन बदल जाता है। आज हम भ्रष्टाचार की समस्या से जूझ रहे हैं। यदि ऐसे लोगों के कानों में शिवबाबा का यह प्यार मंत्र 'अब घर चलना है' बार-बार सुनाया जाये तो वे भी उस सेठ की तरह बदल सकते हैं। केवल भ्रष्टाचार का ही नहीं, प्रभु द्वारा दी गई श्रेष्ठ स्मृतियों द्वारा हर विकार का इलाज संभव है। ❖

खेल दिवस पर विशेष...

खेलों के द्वारा शांति एवं सद्भावना

● ब्रह्माकुमार ज्योति छाबड़ा, बल्लबगढ़

खेल माध्यम बनता है शांति और सद्भावना का। खेल जगत में रंग-भाषा या जाति का कोई महत्व नहीं होता है। जब भी राष्ट्रमंडल या ओलंपिक खेल होते हैं तो उनमें लगभग 200 देश भाग लेते हैं और जिस स्थान पर खेल होते हैं उसे खेल गाँव का दर्जा दिया जाता है। वहाँ सभी खिलाड़ी एक परिवार की तरह रहते हैं। अगर कहीं युद्ध चल रहा होता और ओलंपिक खेलों का समय आ जाता तो इतने समय के लिए युद्ध को रोक दिया जाता था और खेलों का शांतिपूर्वक आयोजन कराया जाता था। इतना महत्व है खेलों का हमारे जीवन में।

खेल – एक मंच पर एकत्रित करने के निमित्त

खेल मनोरंजन का साधन भी हैं। खेलों से खिलाड़ी का शारीरिक स्वास्थ्य तो बेहतर रहता ही है, मन भी शक्तिशाली रहता है। खिलाड़ी की राष्ट्र एवं विश्व में एक अलग पहचान बन जाती है। आजकल तो खेलों के माध्यम से विभिन्न क्षेत्रों में नौकरियाँ एवं स्पांसरशिप के द्वारा पैसा भी बहुत मिलने लगा है। अखबार में एक पेज स्पेशल स्पोर्टस न्यूज के लिए होता है। खिलाड़ी खेलों के माध्यम से अनेक देशों का भ्रमण करते हैं, वहाँ की संस्कृति से परिचित होते हैं और उन्हें अनेक भाषाओं का ज्ञान भी हो जाता है। जब कोई खिलाड़ी विदेश से जीतकर स्वदेश लौटता है तो उसके शहर के लोग उसका स्वागत धूमधाम से करते हैं और उसके सम्मान में अनेक समारोह भी करते हैं। वहाँ हर जाति के लोग इकट्ठे हो जाते हैं अर्थात् एक खिलाड़ी सभी को एक मंच पर इकट्ठा करने के निमित्त बन जाता है। खिलाड़ी की बात को सभी बहुत महत्व देते हैं।

हिम्मत न हारें

श्रेष्ठ खिलाड़ी हार में दुखी और जीत में ज्यादा उत्साहित नहीं होता। वह हर स्थिति में शांत रहता है और हारकर भी जीतने वाले को बधाई देता है और पुन: जीतने की प्लेनिंग करता रहता है। धावक दौड़ते हैं, एक जीतता है, दूसरा हारता है। इस हार और जीत में ज्यादा फासला नहीं होता, मात्र नाक भर का अंतर होता है। हारने वाला यदि मायूस होकर प्रयास छोड़ दे, हिम्मत हार जाये तो वो कभी दोबारा जीत नहीं सकता। कहते हैं, **हारा वो नहीं जिसने बाजी हारी है, हारा वो है जिसने हिम्मत हारी है।** यदि वह फिर से अभ्यास करे, अपनी

कमियों को पहचानकर दूर करे, सही आहार, सही आराम का ध्यान रखे तो यही हार कुछ समय बाद उसके गले में सफलता का हार बनकर आ सकती है। कहा गया है,

'जितनी होगी काली अंधियारी रात,
उतना ही उजियारा सवेरा होगा।
आज हार का हकदार है तू तो,
कल जीत का सेहरा भी तेरा होगा।'

खत्म हुई रंजिश

क्रिकेट के एक वर्ल्ड कप में एक देश का राष्ट्रपति दूसरे देश में खेल देखने गया। वहाँ उन्होंने अनेक विषयों पर चर्चा की। यदि सारे विख्यात अंतर्राष्ट्रीय खिलाड़ी एक मंच पर आकर सारी दुनिया को शांति का संदेश दें तो उनकी बात को सभी बहुत महत्व देंगे। कुछ समय पहले की बात है, दो गाँव आपस में रंजिश रखते थे। किसी ने आकर वहाँ खेलों का आयोजन कराया, दोनों गाँव के खिलाड़ियों ने हिस्सा लिया तो उनकी रंजिश खत्म हो गई।

राजयोग की आवश्यकता

खिलाड़ी को कभी भी जीतने की लालसा में कोई अनैतिक कार्य नहीं करना चाहिए अपितु खेलों में मूल्यों पर सर्वोपरि ध्यान देना चाहिए। ऐसे अनेक आदर्श खिलाड़ी हर खेल में हमारे सामने उदाहरण के रूप में हैं जो हार और जीत को महत्व न दे मूल्यों को महत्व देते हैं। यदि हर खिलाड़ी शांतिदूत बन जाये तो वो विश्व में शांति लाने के निमित्त बन सकता है। इसके लिए आवश्यकता है खिलाड़ियों की राजयोग और आध्यात्मिक-नैतिक मूल्यों की ट्रेनिंग की। यह निचले स्तर से प्रारंभ की जाये इससे वे अपने जीवन को तो श्रेष्ठ बनायेंगे ही, साथ-साथ खेलों में भी अद्भुत प्रदर्शन दिखाकर अधिक पुरस्कार लायेंगे। इन मूल्यों से शारीरिक एवं मानसिक फिटनेस अच्छी हो जाती है। यह ट्रेनिंग ब्रह्माकुमारीज़ की स्पोर्टस विंग अनेक खिलाड़ियों को देने में तत्पर है।

भारत में राष्ट्रीय खेल दिवस 29 अगस्त हॉकी के जादूगर मेजर ध्यानचंद के जन्मदिन के उपलक्ष्य में मनाया जाता है जिन्होंने ओलंपिक हॉकी में 1928, 1932 तथा 1936 में स्वर्ण पदक जीतकर भारत का नाम रोशन किया। वे बड़े शांत स्वभाव के थे और बड़ी सादगी में रहते थे, उनकी एकाग्रता बेमिसाल थी। उन्होंने खेलों के माध्यम से सबका दिल जीत लिया और राष्ट्र को गौरवान्वित किया जिसके फलस्वरूप 1956 में उन्हें पद्मभूषण अवार्ड से नवाज़ा गया। ऐसे हॉकी के जादूगर जिसने भारत का नाम विश्व में रोशन किया, मेरा शत् शत् नमन! ❖

भोग खाकर विलक्षण अनुभव हुआ

ब्रह्माकुमार जर्नादन, भिवंडी

पिछले 14 सालों से भिवंडी में एक भोजनालय में मैं कुक का काम करता हूँ। बाबा के ज्ञान में आने से पहले, गल़त संग होने के कारण मैं दिन में होटल में काम और रात में मादक पदार्थों की चोरी का घृणित कृत्य करने लगा। सुबह की शुरूआत शराब से होती थी और चरस, गांजा पीए बिना मुझे नींद नहीं आती थी। व्यसनों में कई साल बीत गये, मेरे माता-पिता को जब इस बात का पता चला तो उन्होंने मुझे सुधारने का प्रयास किया, पर वे असफल रहे। बुरी आदत छुड़ाने के लिए उन्होंने मेरा विवाह सन् 2002 में कर दिया। इससे भी मुझ में कोई परिवर्तन नहीं आया। मेरी पत्नी भी मुझ से घृणा करने लगी। एक दिन उसने मुझ से कहा, '' तेरे मरने के बाद मेरा क्या होगा?'' मैं उस समय नशे में था, मगर इस बात से मुझे गहरी चोट लगी। मैं चोरी और व्यसन करना छोड़ नहीं सकता था, इनसे तो अब मृत्यु ही छुड़ा सकती है, ऐसा लगने लगा था।

एक दिन मेरे एक सम्बन्धी मुझे प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय ले गये। उस दिन सत्गुरुवार था। शिवबाबा का भोग (प्रसाद) खाने के बाद मुझे विलक्षण अनुभव हुआ, मेरा सारा तनाव निकल गया। बाद में मेरा ज्ञान का कोर्स हुआ और मैं हर रोज़ मुरली (ईश्वरीय महावाक्य) सुनने लगा, मुझे शांति की अनुभूति होने लगी। इसके बाद मैंने चोरी करना और शराब पीना छोड़ दिया पर तंबाकू का सेवन छूट नहीं रहा था। मैंने यह बात निमित्त बहन को कही तो उन्होंने मुझे शिव बाबा को साक्षी मानकर व्यसन छोड़ने का दृढ़ संकल्प करने को कहा और मेरी यह आदत भी छूट गई। मैं मांसाहार करता था पर राजयोग के अभ्यास से मैंने वह भी त्याग दिया। फिर अपने गाँव जाकर परिवार वालों को बाबा का परिचय और ज्ञान दिया, जिससे बहुत सारे लोग बाबा को पहचान गये।

धन्य है शिवबाबा! धन्य हैं बाबा के बच्चे! धन्य है ज्ञान! धन्य है बाबा की पालना। ❖

मिला अनमोल आनन्द का खज़ाना

● शिवप्रकाश मोदी, शिवमणि होम, आबू रोड

जीवन में हमने खूब पढ़ा, कमाया व सब कुछ हासिल करके भी दुखी हैं, प्रेम-शांति की तलाश में भटक रहे हैं, ईश्वर से हर समय माँगते ही रहते हैं परंतु माउन्ट आबू में ब्रह्माकुमारीज़ के सब भाई-बहनें सेवा-भाव से ओत-प्रोत हैं, अपना सर्वस्व ईश्वर को समर्पित कर सब सुविधाओं सहित प्रेम-शांति का जीवन जी रहे हैं। यह कैसे हो रहा है? हमें कैसी प्यारी व अद्भुत जगह देखने का सौभाग्य मिला! क्या हमारा सांसारिक ज्ञान व साधन ही सब दुखों के कारण हैं? माउंट आबू में जब पहली बार आया तब मेरा इस प्रकार का चिंतन चलता रहा। यहाँ की जीवन शैली से इतना प्रभावित हुआ जो शिवमणि होम का स्थायी निवासी बन गया।

लौकिक, अलौकिक दोनों ज्ञान जरूरी

आबू में हमें जानने को मिला कि इन्सान अपने शरीर के प्रति लापरवाह हो खान-पान व जीवनशैली का ध्यान न रख बीमारियों से ग्रस्त हो रहा है। सिर्फ बाहरी रूप से अपने को सजाता रहता है, अंदरूनी ईश्वरीय शक्तियों के चिंतन का प्रश्न ही कहाँ? ध्यान दीजिये, नाविक दोनों पतवारों का इस्तेमाल करता है, चिड़िया दोनों पँखों से सहज उड़ सकती है, इंसान दोनों पैरों द्वारा ही आराम से चल पाते हैं लेकिन सांसारिक जीवन-यात्रा हम सिर्फ एक सांसारिक ज्ञान की समझ से (ईश्वरीय ज्ञान की अज्ञानता में) करते हैं इसलिए दुखी हैं। ईश्वरीय ज्ञान की समझ द्वारा अपने बुरे विचारों, संस्कारों में परिवर्तन कर नैतिक मूल्यों के सहारे सुखी जीवन जी सकते हैं।

आनन्द का खज़ाना हरेक के अंदर

आज सब प्रेम-शांति को भी, किसी सामग्री की तरह बाहर सब जगह ढूँढ़ रहे हैं अथवा एक-दूसरे से माँग रहे हैं जबकि यह अनमोल आनन्द का खज़ाना तो परमात्मा द्वारा हर एक के अंदर भरपूर भर दिया गया है। ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय में ईश्वरीय ज्ञान का नि:शुल्क पाठ पढ़ा। इस विद्यालय में इसी आनन्द के खज़ाने को खोलने की विधि हर आगंतुक को समझाई जाती है। चाबी सबके पास है पर हम दुनियादारी में इतने खो गये हैं कि चाबी कैसे घुमाई जाती है, यह भूल गये हैं।

माला का रहस्य

सूर्य की रोशनी को लैंस द्वारा केन्द्रित करने से कागज़ तक जल जाता है, इसी प्रकार सर्वशक्तिवान परमात्मा की शक्तियों से अपनी

आंतरिक कमज़ोरियों को मिटाना संभव है बशर्ते कि सच्चे मन से एकाग्रचित्त हो उसकी याद में समायें। एकाग्रचित्त अवस्था अभ्यास माँगती है। मोबाइल कनेक्शन जोड़ने से भी आसान परमात्मा से कनेक्शन जोड़ना है। ध्यान दीजिये, 'Connection to God is a free outgoing call, no battery, no charging, no network problem. Always good signal & endless talk time' अर्थात् परमात्मा से बातचीत पूर्णतया नि:शुल्क है, इसमें ना बैटरी को चार्ज करने की बात है, ना नेटवर्क कनेक्शन की बात है और बेहद बातें की जा सकती हैं। संबंध जुड़ते ही परमात्मा की शक्तियाँ स्वत: मिलने लगती हैं। इसे आत्म-अभिमानी अवस्था कहते हैं।

(शेष.. पृष्ठ 26 पर)

वाशिंगटन डी.सी. में आध्यात्मिकता

● डॉ.वेद प्रकाश श्योराण, रोहतक

अमेरिका जाने का प्रोग्राम बनते ही मैंने वाशिंगटन डी.सी. स्थित ब्रह्माकुमारी केन्द्र की जानकारी इंटरनेट से प्राप्त की। दो महीने के वहाँ के प्रवास में मैं नियमित रूप से केन्द्र जाया करूँगा, मैंने फैसला कर लिया था। भारत के स्थानीय सेवाकेन्द्र की निमित्त संचालिका बहन से पत्र लिखवाकर साथ ले गया था। बेटे का निवास वाशिंगटन डी.सी. के साथ लगते आर्लिंगटन शहर में है।

गहन शान्ति

पहुँचने के दो दिन बाद मैंने सिलवर स्प्रिंग स्थित ब्रह्माकुमारी मेडिटेशन सेन्टर जाने का प्रोग्राम बनाया। शांत किंतु भव्य एवं सुसज्जित केन्द्र ने मुझे बहुत प्रभावित किया। केन्द्र में बाबा की धुन धीमे स्वर में बज रही थी। शान्ति इतनी कि कालीन पर मेरे नंगे पैर भी आवाज़ करते प्रतीत हो रहे थे। केन्द्र पर सेवा दे रहे भाई जी से मुलाकात हुई जिन्होंने मुख्य बहन जैना से फोन पर बात करवाई जो मैकलीन स्थित ब्रह्माकुमारी केन्द्र पर गई हुई थी। बहन से बात कर मन को शान्ति का अनुभव हुआ। बहनजी ने मुझे मैकलीन सेन्टर में रविवार को आने का निमंत्रण भी दिया।

पारिवारिक माहौल बहुत भाया

मैकलीन करीब 25 मील की दूरी पर स्थित है। पुत्र वरूण मुझे गाड़ी से छोड़ने गया। सुबह के 8 बजे मैं वरूण के साथ पहुँचा तो आध्यात्मिक क्लास खत्म हो चुकी थी और एक अमेरिकी युवा जोड़ा अपने अनुभव माइक पर सुना रहा था जो हाल ही में मधुबन (आबू रोड) होकर आया था। शांत वातावरण में विदेशियों के बीच मुझे कुछ भारतीय भी दिखाई दिये। मेरा परिचय बहनजी ने स्वयं करवाया – 'दिस ब्रदर इज फ्रॉम इंडिया, बाबा की सेवा करना चाहते हैं।' ये शब्द मेरे कानों में अब भी गूंज रहे हैं। इसके बाद हम सभी बाहर लान में आ गये। बाबा के भोग के साथ दर्जनों प्रकार के फल, केक, जूस व नूडल्स टेबल पर लगाये गये थे। अपने-अपने अनुभव सबने बताये। सात समुद्र पार, हजारों मील की दूरी पर यह पारिवारिक माहौल मुझे बहुत भाया।

माफ करने से अच्छा कौन-सा विकल्प है?

बहन जी से मैं जानना चाहता था कि अमेरिका जैसे देश में पवित्रता की बात कैसे समझ आती है, संसाधनों से संपन्न ये लोग देही अभिमानी कैसे हो सकते हैं, मनमनाभव की आवश्यकता इन्हें कैसे समझाई जाती होगी? अंदर गया तो देखा, बहनजी से एक युवती प्रश्न पूछ रही थी – एक इंसान जिससे कभी मैं मिली नहीं, कोई जानकारी नहीं, मैंने उसका कोई बुरा नहीं चाहा, बुरा नहीं किया, मेरा दूर-दूर तक कोई संबंध नहीं उससे, फिर भी उसने मुझे नुकसान पहुँचाया, दुख दिया। मैंने कष्ट को कई दिन भोगा, फिर उसे माफ कैसे कर दूँ, कहकर वह फफक-फफक कर रोने लगी। जब वह शांत हुई तो बहन जी ने बोलना शुरू किया, '**तो क्या हमें इस आग में जलते रहना चाहिए, ईर्ष्या करके अपने शरीर का, मन का, कर्म का नुकसान उठाना चाहिए। माफ करने से अच्छा कौन-सा विकल्प आपको दिखाई देता है?**' अंग्रेजी बोलने वाले के शब्दों में इतनी आत्मीयता मैंने पहली बार देखी। एक-एक प्रश्न का उत्तर बहन जी देती जा रही थी। उनकी रूहानी दृष्टि से संतोष का अनुभव हुआ।

ईश्वरीय ज्ञान से मिला है हल

कितना भव्य दृश्य था वह। महीनों बीत जाने के बाद आज भी मेरे मन पर अमेरिका के ब्रह्माकुमारी केन्द्र पर बिताये गये एक-एक क्षण की अमिट छाप है। मैं रोहतक (हरियाणा) के गवर्मेन्ट कालेज में

भौतिक विभाग का अध्यक्ष हूँ। सन् 2003 में माउंट आबू के ब्रह्माकुमारी मुख्यालय में चार दिवसीय वर्ल्ड मीडिया कांफ्रेंस में शामिल होने का मौका मिला था। अब स्थानीय केन्द्र पर जाता हूँ व सेक्टर में ही चल रही पाठशाला में नियमित रूप से मुरली सुनता हूँ। ईश्वरीय ज्ञान से मुझे बहुत कुछ मिला है। लोग कहते हैं, भाग्य में जो होगा, हमें अपने आप ही मिलेगा पर मुझे लगता है, बिना कर्म के कुछ नहीं मिलता। बहुत सारे प्रश्नों का हल ईश्वरीय ज्ञान से मिला है। अमेरिका से आने के बाद महसूस हुआ कि भारत खण्ड पर बाबा सही वजह से ही मेहरबान होते हैं।

लोगों द्वारा चुगली, निंदा का व्यवहार देखकर पहले मन विचलित हो जाता था पर अब ज्ञान द्वारा स्थिर रहता है। संस्कारों का महत्व पहले समझ में नहीं आता था। किसी से विचार न मिलने पर तनाव हो जाता था, अब नहीं होता। दिव्य गुणों को ग्रहण करने की इच्छा मात्र से आत्मा को संतुष्टि मिलती है। ईश्वरीय ज्ञान के अपार भंडार से हम कितने मोती चुग पाते हैं, हमारी क्षमता पर निर्भर करता है। खुशी की बात है कि दुनिया के सैकड़ों देशों में बाबा के बच्चे परोपकार के द्वारा अपना भाग्य बना रहे हैं। ❖

जिंदगी का केक

ब्रह्माकुमारी गायत्री वर्मा, जोबट, अलिराजपुर (म.प्र.)

एक कन्या अपनी माँ के पास अपनी परेशानी का बखान कर रही थी। वो छ:माही परीक्षा में फेल हो गई थी। उसकी सबसे प्रिय सहेली से उसका झगड़ा हो गया था। इसी मानसिक तनाव में जब यह अपनी मनपसंद ड्रैस प्रैस कर रही थी तो वो जल गई थी। वह रोते हुए बोली,मम्मी, देखो ना, मेरे साथ सब कुछ उल्टा-पुल्टा हो रहा है। माँ ने मुस्कराते हुये कहा,'' यह उदासी और रोना छोड़ो, चलो मेरे साथ रसोई में, तुम्हारा मनपसंद केक बनाकर खिलाती हूँ।'' यह सुनकर कन्या का रोना बंद हो गया और हँसते हुये बोली, '' केक तो मेरी मनपसंद मिठाई है।''

''कितनी देर में बनेगा'', कन्या ने चहकते हुए पूछा। माँ ने सबसे पहले मैदे का डिब्बा उठाया और कन्या की ओर बड़े प्यार से बढ़ाते हुए कहा, '' ले, पहले मैदा खा ले। '' कन्या ने बड़ी हैरानी से मुंह बनाते हुए कहा,''मैदा, यह भी कोई खाने की चीज़ है।'' माँ ने फिर मुस्कराते हुये कहा,'' तो ले, 100 ग्राम चीनी (शक्कर) ही खा ले।'' कन्या ने मासूमियत से कहा,'' सौ ग्राम चीनी इकट्ठी , यह तो संभव ही नहीं है।'' कन्या को बड़ा आश्चर्य हो रहा था कि माँ आज उससे इस तरह की बातें क्यों कर रही है। तभी माँ ने एसेंस और मिल्कमेड का डिब्बा दिखाया और कहा '' लो इसका भी स्वाद चख लो। '' अब तो कन्या से रहा नहीं गया, बोली, ''माँ आज तुम्हें क्या हो गया है, जो मुझे इस तरह की चीजें खाने को दे रही हो?'' माँ ने बड़े प्यार और शांति से जवाब दिया, '' बेटा, केक इन सभी बेस्वादी चीजों से ही बनता है और ये सभी मिलकर ही तो केक को स्वादिष्ट बनाती हैं।'' माँ ने आगे कहा, बेटा, मैं तुम्हें सिखाना चाह रही थी कि जिंदगी का केक भी इसी प्रकार की बेस्वाद घटनाओं को मिलाकर बनाया जाता है। अगर तुम छ:माही परीक्षा में फेल हो गई हो तो इसे चुनौती समझो और वार्षिक परीक्षा में मेहनत करके प्रथम श्रेणी में आने का प्रयास करो। अगर तुम्हारा अपनी सहेली से झगड़ा हो गया है तो अपना व्यवहार इतना मीठा बनाओ कि फिर कभी किसी से झगड़ा न हो और तुम्हारी एक से ज्यादा सहेली हों। यदि मानसिक तनाव के कारण मनपसंद ड्रेस जल गई तो आगे से सदा ध्यान रखो कि मन की स्थिति हर परिस्थिति में अच्छी हो। बिगड़े मन से काम भी तो बिगड़ेंगे। कार्यो को कुशलता से करने के लिए मन के चिंतन को कुशल बनाना अनिवार्य है। अब उस बच्ची को जिंदगी का केक बनाने की विधि समझ में आती जा रही थी। ❖

अविस्मरणीय संस्मरण...

शान्ति सर्वोपरि है

● **ब्रह्माकुमारी राजकुमारी, मजलिस पार्क, दिल्ली**

घटना लगभग 36 वर्ष पूर्व की है। आदरणीया दादी जी माऊण्ट आबू से दिल्ली आने वाली थी। हम दादी जी को रिसीव करने पुरानी दिल्ली रेलवे स्टेशन सुबह-सुबह पहुँचे। उन्हें लेने अनेक श्वेत वस्त्रधारी पहुँचे हुए थे। कोई पुष्प भेंट कर रहा था, कोई हाथ मिला रहा था, कोई उनकी दृष्टि लेने को लालायित था। स्टेशन पर इस निराले दृश्य को देख बहुत से यात्रीगण भी उस फरिश्ते की ओर उन्मुख होने लगे। ऐसा लग रहा था मानो हंसो का संसार उमड़ पड़ा हो।

इस नयनाभिराम दृश्य के बीच अचानक ज़ोर-ज़ोर की आवाज़ें आने लगीं। सभी का ध्यान उन आवाज़ों की ओर चला गया। हुआ यह था कि दादी जी के साथ मधुबन से दो भाई भी आए थे जिन्होंने कुली से सामान उतरवाया और उसे स्टेशन के बाहर खड़ी गाड़ी में रखने को कहा। सामान भी ज्यादा नहीं था। उन दिनों इस कार्य का कुल 50 रुपये रेट हुआ करता था परन्तु कुली अपनी जिद्द पर अड़ा हुआ था कि 150 रुपये ही लूंगा। सभी लोगों का ध्यान अपनी ओर होता देखकर वो अपनी मांग और भी ज़ोर-ज़ोर से रखने लगा। जब वह किसी के भी समझाने से नहीं समझा तो दादी जी ने परिस्थिति की नाज़ुकता को देखते हुए उसे अपने पास बुलाया और 150 रुपए दे दिए। वह खुश हो गया और दादी जी के चरण स्पर्श करके चला गया। हम सब दादी जी के साथ स्टेशन से बाहर आ गए।

दिल्ली पाण्डव भवन तब नया-नया ही लिया गया था। दादी जी ने सारी दिल्ली का क्लास कराना था। क्लास में पहुँच कर स्वागतादि की विधि सम्पन्न होने के पश्चात् दादी जी ने 'ओम् शान्ति' बोलकर क्लास के शुरू में स्टेशन वाली घटना सुनाते हुए कहा कि आज दादी ने (दादी जी अपने लिए मैं शब्द का प्रयोग कभी नहीं करती थी) कुली को 50 रुपये के बदले डेढ़ सौ रुपए दे दिये। क्या दादी को यज्ञ के पैसे की वैल्यू नहीं है? दादी को यज्ञ के एक-एक कणे की भी बहुत-बहुत वैल्यू है परन्तु यज्ञ की इज्जत और शान्ति का महत्व पैसे से अधिक अमूल्य होने के कारण दादी ने ऐसा किया। यदि ऐसा ना किया जाता तो यह आवाज़ फैल जाता कि देखो इतनी बड़ी संस्था ने गरीब का पैसा मार लिया। जन साधारण घटना की सत्यता की गहराई में कभी नहीं जाते। व्यर्थ के शोर की तुलना में शान्ति एक बड़ी शक्ति और सत्ता है जिसे हर कीमत पर बचाना हमारा कर्त्तव्य है। शान्ति सर्वोपरि है। ❖

मिला आनन्द...पृष्ठ 23 का शेष

आत्म-अभिमानी अवस्था एक एन्टीवायरस की तरह है जो जीवन के भयानक वायरस जैसे उदासी, निराशा आदि से बचाती है। सुप्रसिद्ध 108 दानों की माला का रहस्य सुंदर एवं गूढ़ है। इसमें जीवन जीने की कला का रहस्य छिपा हुआ है। एक का अर्थ है, एक परमात्मा में मन को लगाओ। शून्य का अर्थ है, विकारों-दुर्गुणों से शून्य हो जाओ। आठ का अर्थ है आठों शक्तियाँ (सहनशीलता, समाने की शक्ति, परखने की शक्ति, निर्णय करने की शक्ति, सामना करने की शक्ति, संकीर्ण करने की शक्ति, समेटने की शक्ति, सहयोग शक्ति) धारण करो। योग का मतलब ध्यान, चिंतन, जोड़ना, मिलना भी होता है। शारीरिक रूप से हम सब मिलते हैं लेकिन आत्मा का सर्वशक्तिवान परमात्मा से मिलन सिर्फ ध्यान या चिंतन से ही संभव है। परमात्मा से योग होने को ही राजयोग कहा जाता है। ❖

नाटक

गीता सार

● ब्रह्माकुमार डॉ.रामश्लोक, शान्तिवन

पात्र-परिचय:-

डॉ.हरीश – गीता रिसर्च स्कालर
रमेश – डॉ.हरीश का मित्र
गीता पाठी
गीतापाठी की पत्नी
पंडित रामनाथ शुक्ल – कीर्तन मण्डली के मुख्य संन्यासी जी
व्याकरणाचार्य हर्षिदानन्द जी – प्रकांड गीता विद्वान
प्रोफेसर राजू – एक पवित्र गृहस्थी
सुशीला – प्रोफेसर राजू की पत्नी एवं अन्य पार्टधारी।

प्रथम दृश्य

(तीन रिसर्च स्कालर कुर्सियों पर बैठे गीता पर विचार कर रहे हैं। रमेश का प्रवेश)

रमेश – हैलो डॉ.हरीश, नमस्कार, हाऊ आर यू? बहुत ही व्यस्त नजर आ रहे हो।

हरीश – कौन? रमेश भाई, नमस्कार। कहो, बहुत दिनों बाद मिलन हुआ। परिवार में सभी राजी-खुशी से हैं ना?

रमेश – ईश्वर की कृपा से सभी भले-चंगे हैं परंतु दोस्त, आप तो ऐसे व्यस्त हैं जैसे कि सारे संसार का बोझ आपके ही ऊपर आ गया हो। क्यों, यूनिवर्सिटी का काम बहुत बढ़ गया है क्या, जो दोस्त-मित्रों से मिलने की भी फुर्सत नहीं?

हरीश – नहीं रमेश, हम सबने एक नई खोज करने की योजना बनाई है। यह सभी रिसर्च स्कालर हैं, इन्होंने कई विषयों पर खोज की है..परंतु

रमेश – परंतु क्या? आपने तो भारत की प्राचीन संस्कृति, सभ्यता और विश्व-इतिहास में कई डिग्रियाँ हासिल की हैं, अब क्या बाकी रहा?

हरीश – भाई रमेश, आपको मालूम होगा कि हमारी यह जिज्ञासा है कि हर विषय की खोज, खोज और खोज की जाये। केवल लिखी गई बातों को हूबहू स्वीकार करके, लकीर का फकीर बने रहना, यह हमें कतई स्वीकार नहीं। हम तो चाहते हैं कि सत्य को खोजकर हर प्राणी तक पहुँचाये और बुद्धिजीवी वर्ग को एक नव पथ प्रदान करें। मैंने भौतिक विषयों की तो खोजें की परंतु कुछ समय से मेरी रुचि आध्यात्मिकता की ओर बढ़ी है। मैं सर्वशास्त्र शिरोमणि श्रीमद्भगवद्गीता का अध्ययन कर रहा हूँ जिसमें सर्व वेदों-शास्त्रों का सार समाया है, जिसमें राजनीति, धर्म, विज्ञान और अध्यात्म का समन्वय है, जिसमें हर इंसान के सुखी जीवन जीने की कला वर्णित है, कर्म और योग का घनिष्ठ संबंध है, जिसमें आत्मा-परमात्मा, जन, प्रकृति और पुण्य का विश्लेषण है। परंतु, मुझे एक बात समझ में नहीं आती कि इतने श्रेष्ठ शास्त्र का समस्त विश्व के करोड़ों मनुष्य रोज अध्ययन कर रहे हैं तब भी न जाने क्यों मानवता का दिनोंदिन पतन होता जा रहा है। आज गीता इस संसार में सूर्य के समान चमक रही है और लोग दिनोंदिन अंधकार की ओर बढ़ते जा रहे हैं। इसका कारण क्या है? क्या इसमें कुछ मिस्टेक (भूलें) हो गई हैं जो हम अपने पथ से विमुख होते जा रहे हैं। इसकी

वास्तविकता को जानने के लिए हर बुद्धिजीवी वर्ग उतावला है।

रमेश – हाँ भाई! मेरा भी यही प्रश्न है। मैंने कई बार इस पर विचार किया परंतु इसका समाधान कहाँ है?

हरीश – भाई रमेश! मैं आज आपको इसके समाधान की एक खुशखबरी सुनाता हूँ..

रमेश – वह क्या है हरीश भैया..

हरीश – देखो रमेश, कुछ दिनों के लिए मैं आपसे विदाई लेता हूँ और कल से महल से लेकर झोंपड़ी तक, विद्वान पंडित से लेकर अनुभवी व्यक्ति तक, संन्यासी से लेकर गृहस्थी तक – भारत के एक-एक विदूषक के दरवाजे खटखटाऊँगा, इसके समाधान के लिए कि गीता ज्ञान की जरूरत कब, कहाँ और किसको थी, जबकि आज सारी दुनिया धर्मसंकट में पड़ी है, चारों ओर पापाचार, भ्रष्टाचार का बोलबाला है, क्या इस समय गीता-ज्ञान की जरूरत नहीं है?

रमेश – धन्य हो भैया, आपने तो अपना जीवन ही इस ऊँचे उद्देश्य को प्राप्त करने में लगा दिया है। आधुनिक युग में इसकी बड़ी आवश्यकता है, ईश्वर आपको मदद करे, यही मेरी शुभभावना है।

(दोनों चले जाते हैं)

हरीश *(पर्दे के पीछे अपने आप से)* **–** विषय बहुत गहरा है, पूछना भी हरेक से चाहिए। इससे सभी के जीवन की समस्यायें हल होंगी। उनके धर्म और कर्म श्रेष्ठ होंगे। तभी भारत का भविष्य उज्ज्वल हो सकेगा *(श्रोतागणों की ओर देखकर)* मैं आप सभी का विचार लेना चाहता हूँ..आशा है आप मुझे प्रोत्साहन दिलायेंगे।

दूसरा दृश्य

(स्टेज पर एक गीता-पाठी बैठा है और उच्चारण कर रहा है)

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यै:शास्त्र संग्रहै:।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुखपद्मात विनि:सृता।।
मल निमोचनं पुसां जलस्नानं दिने दिने।
सुहर गीताभ्यसि स्नानं संसार मलनाशनम्।।

जैसे शारीरिक मल दूर करने के लिए नित्य जल-स्नान जरूरी है वैसे ही गीता-अभ्यास करने से संसार का मल नाश हो जाता है।

(डॉ.हरीश का प्रवेश)

नमस्कार आत्मन्

गीतापाठी – नमस्कारम् नमस्कारम्। आगच्छ, तिष्ठ-तिष्ठ! प्रिय बन्धु, कहो, आपका कैसे आना हुआ? विराजिये!

हरीश – मैं आपकी महिमा सुनकर ही यहाँ आया हूँ..आप गीता प्रेमी हैं..आपसे मैं गीता के विषय में कुछ जानना चाहता हूं।

गीतापाठी – हाँ-हाँ, क्यों नहीं..मेरा तो यही कर्त्तव्य है गीता पर गहराई से विचार करना। आपको मालूम होगा कि गीता सर्वशास्त्रों का सार है। अत: गीता को भली प्रकार पढ़कर अर्थ और भाव सहित अंत:करण में धारण करना सबका मुख्य कर्त्तव्य है। गीता ही एक ऐसा शास्त्र है जो स्वयं भगवान के द्वारा गाई गई है।

हरीश – तभी तो इसके हर श्लोक में भगवानुवाच लिखा हुआ है।

गीतापाठी – सचमुच आप बड़े समझदार हो। स्वयं भगवान ने ही इसका महत्व बताते हुए कहा है कि सिर्फ इसे पढ़ना और सुनना ही नहीं अपितु इसकी शिक्षाओं को धारण करने से मनुष्य देवपद प्राप्त कर सकता है।

हरीश – लेकिन महाराज! हजारों वर्षों से लोग इसे पढ़ रहे हैं फिर भी दिनों दिन मानवता का पतन हो रहा है। हर क्षेत्र में गिरावट ही नज़र आती है। ऐसा क्यों? आज सभी अपने जीवन से परेशान क्यों नज़र आते हैं?

गीतापाठी – लोग केवल गीता का पाठ ही करते हैं। उसे जीवन में उतारने का प्रयत्न नहीं करते।

हरीश – गीता की इतनी अच्छी शिक्षाओं को धारण

करने की शक्ति मनुष्य में क्यों नहीं जबकि सत्य में शक्ति होती है तो क्यों सत्य गीता मनुष्य को श्रेष्ठ जीवन बनाने की शक्ति प्रदान नहीं कर सकी। अवश्य ही हमें इसके बारे में कुछ और जानना बाकी है।

(अचानक गीता-पाठी की स्त्री का प्रवेश)

स्त्री – *(आवेश से)* अजी सुनते हो, मैं कब से चिल्ला रही हूँ। सारा गला ही घुट गया और जनाब गपशप में बिजी हैं। मैंने कहा, घर में राशन नहीं है, बच्चे उधर लड़-मर रहे हैं और महाशय जी गीता पर भाषण करते जा रहे हैं।

गीतापाठी – फिर आ टपकी, एक मिनट भी चैन नहीं लेने देती। कुछ न कुछ लंबी लिस्ट ले ही आती है। क्या है?

स्त्री – घर में आधा दर्जन बच्चे हैं, क्या वो भूखे मरेंगे, धंधाधोरी तो करना नहीं, जैसे कि गीता ही सबका पेट भर देगी। जो भी आया उसे गीता सुनाने लगेंगे।

गीतापाठी – चुप रहो, नहीं तो डंडे से मैं अभी तेरी अक्ल सीधी कर दूँगा।

स्त्री – जा, जा! तूने डंडा मारने के लिए मुझे घर में रखा है। लल्लू की हालत तो देख, तीन दिन से बीमार है। उसकी हालत कभी पूछी, न डॉक्टर के पास जाना, न दवाई लाना। कुछ भी कहूँगी तो डंडे से बात करेगा।

गीतापाठी – (आवेश में) तू चुप रहती है? न देखेगी मेहमान बस जरा-सी बात में दूध की तरह उफन पड़ेगी। ठहर, अभी मैं तेरी अक्ल ठिकाने लगाता हूँ। *(डंडा निकालता है, मारने दौड़ता है, माता बैठ जाती है और रोने लगती है)*

हरीश – *(डंडा छीनते हुए)* महाराज छोटी-सी बात में क्रोध करने की क्या जरूरत! आप तो प्रतिदिन गीता पढते हैं ना! गीता में भगवानुवाच है कि काम, क्रोध मनुष्य के महाशत्रु हैं।

गीतापाठी – छोड़िये जनाब, ये बातें गृहस्थ के झंझटों में कैसे संभव हैं? भगवान ने तो अर्जुन को कहा था, मुझे थोड़े ही कहा है। अर्जुन ने तो अपने इतने संबंधियों, इष्ट मित्रों, गुरुओं को जान से मारा था। हमने अपनी बीबी को दो डंडा मारा तो क्या हुआ?

हरीश – क्षमा कीजिए महाराज! अभी-अभी आप गीता का महत्व बता रहे थे। आप जैसे महापुरुषों को तो ये शिक्षायें धारण करके समाज के सामने आदर्श प्रस्तुत करना चाहिए परन्तु आपको तो आधा दर्जन बच्चे हैं। आपने विकारों को कहाँ छोड़ा?

गीतापाठी – छोड़िये इन बातों को। आप इसे नहीं समझेंगे..खुद श्रीकृष्ण भगवान को 16,108 रानियाँ थीं, हजारों बच्चे थे। मेरे तो सिर्फ आधा दर्जन हैं।

हरीश – यही बात मुझे जँचती नहीं कि श्रीकृष्ण 16,108 रानी होते भी योगीराज कहलाये और एक बीबी वाले स्वयं को भोगी कहते हैं। आज जिनकी महिमा सारी दुनिया 'सर्वगुणसंपन्न, संपूर्ण निर्विकारी' गाती है, उनके लिए हजारों बीबी-बच्चे कहना, कितनी मानहानि की बात है। यह आपके मुख से शोभा नहीं देता, यह उनकी महिमा नहीं, ग्लानि है।

गीतापाठी – आपकी बात तो ठीक है हरीश परंतु हम क्या करें। घर गृहस्थ के झंझटों में ये सब करना बड़ा मुश्किल है। आपने विषय बहुत सुंदर चुना है। हम जरूर आपकी बातों पर विचार करेंगे और समाज और देश के सामने रखेंगे।

हरीश – आप जैसे विद्वानों का हमें इसमें योगदान चाहिए जो नई विचारधाराओं का आदर करें। अभी मैं कुछ अन्य विद्वानों से भी मुलाकात करूँगा।

(पर्दा गिरता है)

हरीश *(अपने आप से)* – जब मैं गीता पढ़ता हूँ तो मेरा अंत:करण शीतल हो जाता है, हृदय गद्‌गद्‌ हो जाता है..स्वयं संजय भी गीता ज्ञान सुन कर अंत में कहता है, मैं भगवान और अर्जुन के इस संवाद को सुनकर बारंबार हर्षित होता हूँ..फिर भला अर्जुन को सम्मुख गीता सुनकर वीर रस या युद्ध की भावना कैसे जागृत हो गई? (क्रमश:)

सेवा अर्थात् भाग्य

● ब्रह्माकुमार राजेश, बैरागढ़

मुझ आत्मा को परमात्म प्यार की प्यास 8 वर्ष की अल्प आयु से ही थी। जीव-जंतुओं को दाना-पानी देना मेरा नित्यकर्म था। गीता, रामायण पढ़े बिना और सूर्य नमस्कार किये बिना पानी भी ग्रहण नहीं करता था। अन्य धर्मशास्त्रों का भी अध्ययन करता था। दिन-भर में पाँच जगह सत्संग करने जाता था। बचपन से ही एकांतप्रिय होने के कारण बगीचे या पहाड़ी पर घंटों मनन करने का अभ्यास करता रहता था। एक दिन सत्संग में सुना कि बुद्धि रूपी पात्र मानव-सेवा करने से साफ होता है। इसके लिए हड्डी जोड़ने की निःशुल्क सेवा 15 साल तक की। करीब चालीस हजार मरीजों की सेवा का सौभाग्य प्राप्त हुआ। किंतु इतना सब करते रहने के बाद दिन-प्रतिदिन अशांति, चिड़चिड़ापन इतना बढ़ गया कि मरीजों की आवाज़ न आये इसलिए कान में रूई डालकर बैठने लगा। फिर धीरे-धीरे खराब आदतों का भी शिकार हो गया। परमात्म प्राप्ति का सच्चा रास्ता कहीं भी नज़र नहीं आ रहा था।

तनाव और उदासी नहीं गये

फिर मैंने हठयोग, त्राटक की साधना प्रारंभ कर दी। जमीन पर सोना, शरीर को कष्ट देना, शरीर को बेस्वाद खाना बनाकर खिलाना आदि-आदि किया। कुछ अच्छा खा लिया या अच्छा पी लिया तो मुख को सज़ा देने के लिए या तो ब्लेड से जुबान पर घाव करता था या फिर मुख को विष्ठा या पेशाब पिलाने की सज़ा देता था ताकि मुख ने कचौरी खाई तो इसकी सज़ा भोगे। खुद में अकेलापन महसूस होने लगा था। कई बार अपनी जीवहत्या के बारे में सोचता था। क्रोध को शांत करने के लिए बाजू पर ब्लेड मारकर बार-बार खून निकालता था। जीवन में जो भी कार्य मिले, वो सब अधूरे ही छूट जाते थे। खुद को बहुत बदनसीब समझने लगा था। कई ज्योतिषियों के पास गया, हाथ की आठों उंगलियों में एक के बाद एक रत्न धारण किये परंतु कुछ फायदा नहीं हुआ। फिर तांत्रिक के पास गया। उसने पैसे लेकर मेरे ऊपर 75 नींबू काटे ताकि नज़र उतरे। बदनसीबी दूर करने के लिए एक बकरे की बलि चढ़ाई किंतु फिर भी तनाव, उदासी राहुकेतू की तरह मेरे आगे-पीछे बैठे रहे।

राजयोग कोर्स से छुटी बुरी आदतें

कुछ समय पश्चात् घरवालों ने ज्वेलर्स की शॉप मेन बाज़ार में खोलकर दी। मुझे पैसे की ललक बचपन से नहीं थी। सत्संगों की भी

छाप लगी थी कि पैसा माया है इसलिए कुछ समय के बाद दुकान को खुली छोड़कर भगवान को ढूँढ़ने निकल पड़ा राजस्थान की ओर। उस आयु में मैंने अपना पूरा शहर भी नहीं देखा था, दूसरा शहर तो मेरे लिए असंभव बात थी। रोते-रोते ढूँढ़ते हुए जब परमात्मा नहीं मिला तो मैंने परमात्मा को वापसी में बहुत गाली दी। वापस घर आया, सब शास्त्रों की पोटली बनाकर फेंक आया। घरवालों ने मुझे मानसिक तनाव के डॉक्टर को दिखाया। डॉक्टर ने कहा, ठीक होने में आठ साल लग सकते हैं। घरवालों ने दुकान बंद करवाकर मुझे अपने हाल पर छोड़ दिया। मैं फिर भी भगवान को याद करने बगीचे या श्मशान घाट पर जाता रहा। एक भाई, जो मेरे साथ पहले सत्संगों में जाया करता था, ने ब्रह्माकुमारी आश्रम का पता दिया। मैं उसी दिन बढ़ी हुई दाढ़ी लिए आश्रम पहुँच गया। **आश्रम पर बहनों ने**

राजयोग का कोर्स करवाया। मेरी सभी बुरी आदतें सिगरेट, माँस, तनाव, मायूसी, ऐसे भाग गई जैसेकि थी ही नहीं। तनाव भी धुएँ की तरह उड़ गया।

व्यवहार में आया परिवर्तन

मैं सेन्टर जाता रहा पर इन बातों से पूरी तरह अनभिज्ञ ही रहा कि बहनजी का नाम क्या है, सेंटर पर जिज्ञासु कौन आते हैं आदि-आदि। एक साल तक किसी से बात भी नहीं की। भोग भी नहीं खाया, बस, मुरली सुनता था और पहाड़ी या बगीचे में उसका मनन करने चला जाता था। आज महसूस होता है कि हमारी निमित्त बहनों ने कितना न सहन किया होगा हमारा व्यवहार। पर अब परिवर्तन आ गया है। अब निमित्त बहनों के आदेश को सिर-माथे पर रखते हैं। बहनों की आज्ञा सो बाबा की आज्ञा मानकर चलते हैं। मुझ आत्मा को इस बात की बेहद खुशी है कि जब बाबा ने हमें चुना उस समय केवल एक ही भाई मैं आश्रम पर आता था, आज बाबा की बगिया में करीब 30 भाई हैं।

नष्टोमोहा बनकर सेवा की

आज मुझ आत्मा को ज्ञान में 11 साल हो गये हैं। मुरली एक दिन भी नहीं छुटी है। इसकी प्रेरणा हमें ब्रह्मा बाबा के जीवन से मिली है। इस बीच लौकिक माता की तबीयत बहुत खराब हुई। उनको बड़े-बड़े घाव हो गये। रोज़ कपड़े पहनाना, नहलाना, बाल बनाना, ड्रेसिंग करना, दवाई देना – यह सेवा बाबा ने मुझसे खूब करवाई। कभी भारीपन महसूस नहीं हुआ। सेवा की नष्टोमोहा बनकर। इसका प्रमाण है, माताजी ने शरीर छोड़ा तो बाबा की याद में था, एक आँसू भी नहीं आया। मैं जो हड्डी जोड़ने की सेवा जानता था और घर में करता भी था, उसके लिए बहनजी ने शुभ राय दी कि आप घर की बजाय बाज़ार में दुकान खोलो, अपना खर्च भी निकालो। इसके बाद मैंने सर्राफा बाज़ार में क्लीनिक खोल लिया जो बहुत सेवा कर रहा है।

कुमार जीवन है जिसके लिए बाबा ने कहा है, कुमार अर्थात् शेर और शेर कभी अपना प्यार शेयर नहीं करता। इसलिए घर के सारे काम झाड़ू-पोछा, बर्तन, खाना, कपड़े धोना तथा क्लीनिक साफ करना – छह बजे तक पूरे हो जाते हैं। घर की ज़िम्मेदारी या क्लीनिक की ज़िम्मेदारी के कारण न कभी मुरली छुटी, न बाबा की सेवा। **बाबा करा रहा है, हम निमित्त बनकर कर रहे हैं। सेवा के बहाने अपना भाग्य बना रहे हैं। मैं तो महसूस करता हूँ, बाबा ने हमारा भाग्य बनाने की कलम हमारे ही हाथ में दी है। भाग्य भी हमारे आगे-पीछे चक्कर लगाता है।** ❖

संजय की कलम से...पृष्ठ 4 का शेष

उपाधि का अधिकारी बनने से पूर्व तथा वैकुण्ठ का देवराज पद प्राप्त करने से पूर्व के जन्म में ही श्री कृष्ण ने गीता-ज्ञान और योगाभ्यास रूपी पुरुषार्थ किया होगा। लोग यह वाक्य भी प्राय: प्रयुक्त किया करते हैं कि 'न जाने नारायण किस साधारण रूप में आ जायें?' इससे भी संकेत मिलता है कि श्री नारायण पहले साधारण रूप में होंगे और तब उन्होंने श्री नारायण पद दिलाने वाला पुरुषार्थ किया होगा।

अतएव आज लोग जन्माष्टमी का उत्सव मनाते हैं तो उन्हें इस ओर भी ध्यान देना चाहिए कि श्री कृष्ण ने गीता-ज्ञान तथा राजयोग के अभ्यास द्वारा ही वह श्रेष्ठ पद प्राप्त किया था। परन्तु आज होता क्या है कि लोग श्री कृष्ण का गायन-पूजन तो करते हैं और उनकी महिमा तथा महानता का बखान करते हैं परन्तु जिस सर्वोत्तम पुरुषार्थ द्वारा उन्होंने वह महानता प्राप्त की थी और पदमो-तुल्य जीवन बनाया था, उस पुरुषार्थ पर अथवा ज्ञान-योग रूपी साधन पर वे ध्यान नहीं देते। वे यह नहीं सोचते कि श्री कृष्ण हमारे मान्य पूर्वज थे, अतएव हमारा कर्त्तव्य है कि हम उनके उच्च जीवन से प्रेरणा लेकर अपना जीवन भी वैसा उच्च बनाने का यथार्थ पुरुषार्थ करें। ❖

विश्व कल्याण सरोवर

आपको सूचित करते हुए अति हर्ष हो रहा है कि पिछले 10-11 वर्षों से सोनीपत में विश्व कल्याण सरोवर नाम से रिट्रीट सेन्टर बनाने का प्रयास चल रहा था जिसमें कुछ सरकारी अड़चने आ रही थीं। अभी हरियाणा सरकार ने 8 एकड़ भूमि पर ट्रेनिंग सेन्टर बनाने की मंजूरी दे दी है तथा जमीन तक जाने का रास्ता भी मिल गया है। अभी वहाँ निर्माण कार्य प्रारंभ हो गया है। आदरणीय भ्राता जगदीश जी की चाहना थी कि सोनीपत में प्यारे बापदादा को प्रत्यक्ष करने का एक ऐसा अद्भुत स्थान बने जो देश-विदेश के आकर्षण का केन्द्र हो। आइये हम भ्राता जगदीश जी की इस चाहना को मिल-जुलकर पूरा करें। विश्व कल्याण सरोवर के संबंध में आदरणीया दादियों के शुभकामना संदेश नीचे वर्णित हैं – सम्पादक

आदरणीया दादी जानकी का शुभकामना संदेश

सोनीपत का जब नाम आता है तो मुझे अपना जगदीश भाई याद आता है। सोनीपत से आता था कोर्स करने। जगदीश भाई के कारण सोनीपत में सेवा की खींच होती थी। अभी सोनीपत में सेवा का सुंदर स्थान बन रहा है। उसकी खुशी बहुत है। वंडर है बाबा का। अभी हमारे भाई-बहनें खुशी से सेवा कर रहे हैं। आत्म भाई, भरत भाई, अमीरचंद भाई, लक्ष्मण भाई। लक्ष्मण भाई का भले शरीर कैसा भी है पर जी-जान से सेवा कर रहा है। हमारी तो यही भावना है कि दूसरा जब मम्मा का मास आये तो यह पूरा बन जाये। बाबा का कोई अलर्ट, एक्यूरेट मस्त बच्चा निमित्त बनकर खड़ा हो जाये तो काम हुआ ही पड़ा है। सोनीपत कोई हद नहीं, बेहद का स्थान है। इसे ऐसा अच्छा बनाओ जो सारा विश्व देखकर कहे, चलो-चलो, सोनीपत चलते हैं। यह स्थान ऐसा शानदार होगा जो भी पास होगा, सबका ध्यान खींचेगा। देरी नहीं है।

दादी हृदयमोहिनी का शुभकामना संदेश

मैं समझती हूँ कि सोनीपत की बड़ी जमीन का रहा हुआ भाग्य अब खुलना ही चाहिए। इतना बड़ा स्थान जब बनेगा तो आवाज तो फैलेगा कि इन्हों का इतना बड़ा स्थान बना है। अभी सिर्फ जमीन देख रहे हैं, फिर बना हुआ देखेंगे तो उन्हों को ब्रह्माकुमारी के लिए उमंग उठेगा। बहुत समय से इंतजार कर रहे हैं, अभी होना चाहिए। गवर्मेन्ट का क्लीयर हो गया तो अच्छा है। हमारी तथा बाबा की बहुत-बहुत शुभभावना है तो भावना का फल तो मिलता ही है।

दादी रतनमोहिनी का शुभकामना संदेश

ये सोनीपत का स्थान जो तैयार हो रहा है, इससे बहुत सेवा होनी है। हाइवे पर होने के कारण इस स्थान से बहुतों का भाग्य खुलने वाला है। सर्व के सहयोग से यह स्थान बहुत आकर्षणमय बनेगा और बहुत आत्मायें इसमें सेवा दे करके अपना भाग्य बनायेंगे।